अध्याय-17

सामाजिक व शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों का नौकरियों में आरक्षण संवैधानिक व न्यायिक विश्लेषण

आरक्षण की सीमा व अवधि

व्यापक अर्थ में अवसर समता, सौपानात्मक समाज में सदस्यों के लिए तब ही अर्थ पूर्ण हैं, जब तक ऐसी कुशल नीति अपनाई जाए जिसके द्वारा पिछड़े हुए व्यक्तियों को बहुत अच्छा वातावरण मिले और जब पूर्ण रूप से दबे हुए समूह लोकजीवन और आर्थिक गतिविधियों जिसके अंतर्गत राज्य के अधीन सेवा भी सम्मिलित हैं, में उचित दावा कर सकें या जब राज्य के क्रियात्मक रूप से कार्य करने के परिणाम स्वरूप वर्गहीन और जातिहीन समाज विकसित हो। पिछड़े हुए सामाजिक समूहों को विशेष सावधानी से मदद करने के लिए कार्य करना ऐसा एक कदम है जो व्यापक और स्थाई समता के विरुद्ध नहीं है। (न्यायाधिपति कृष्ण अय्यर ए.आई.आर. 1976 सु. को 490 (1976) 3 उ. मा. नि. प. 936 पृष्ठ 1066 ए. 1067) केरल राज्य बनाम एन. एम. थामस"।

इस असमानता भरे संसार में इस सिद्धांत को कि सभी व्यक्ति बराबर है, मानने में व्यवहारिक कठिनाईयां हैं क्योंकि पूर्ण समता से या तो हिंसात्मक निर्दयता को बल मिलता है या फिर उससे निष्क्रिय आरक्षण को बढ़ावा मिलता है, इसलिए यह आवश्यक हो जाता है कि समता के खण्डों को उपयोगी बनाये जाने के लिए साधारण वर्ग सर्वश्रेष्ठ वर्ग के बीच कोई कल्पनात्मक और वास्तविक अस्थायी व्यवस्था की जाए। इस उपयोगिता बाद से वर्गीकरण और अन्तर की न्यायिक व्याख्या तो हुई ही है, साथ ही साथ इसके उप-उत्पादन के रूप में समान व्यक्तियों के बीच समता वाली और असमान बातों पर भिन्न-भिन्न रूप से व्यवहार किए जाने वाली बात भी आ गई है।

अनुच्छेद 14 से 16 तक का सामाजिक अभिप्राय अर्थहीन एकरूपता नहीं है यह तो ऐसी प्रक्रिया है जिससे निम्न वर्ग की अप्राकट योग्यताओं की बृहत्तर सुविधाएं प्रदान करके समता के बृहत क्षेत्र में समता लाई जा सकती है। यह कर्मण्य और योग्य व्यक्तियों के स्थान पर अकर्मण्य और निष्क्रिय मध्यम वर्ग के व्यक्तियों को रखने की कोई कार्य पद्धति नहीं है। तथापि यदि, राज्य वर्गीकरण का उपयोग हैसियत वालों और विशिष्ट वर्ग को बचाने के लिए कर्तव्या-कर्तव्य के विचार से करता है तो अनुच्छेद 14 से 16 के लिए ना वापसी, सीमा आ जाती है और ऐसी **चालाकियों** को खत्म करने के लिए न्यायालय की अधिकारिता सचेत हो जाती है। अनुच्छेद 16 की आत्मा यही है कि वातावरण

एवं दलित वर्ग की कठिनाइयों को दूर करने में असफल होती है, वह पिछड़ा वर्ग कल्याण के क्षेत्र में जनता को मूर्ख बनाती है। वास्तव में जागरुक मानव समुदाय, जिसे पीढ़ी दर पीढ़ी न्याय से वंचित किया गया है वह बहुत अधिक समय तक इस बात को चुपचाप बर्दास्त नहीं करेगा। किन्तु दलित पैंथर के रूप में परिवर्तित हो जायेगा। जैसा कि अन्य देशों में ब्लेक पैंथर ने किया है। इस बाबत श्री गजेन्द्र गड़कर, भारत के भूतपूर्व न्यायाधीश के हाल में दिए गए दो स्मृति भाषाणों में इस विक्षुब्ध करने वाली बात पर जोर दिया है। न्यायशास्त्रियों को वास्तविक जीवन की गतिविधियों को भी सुनना चाहिए और सिद्धांतों के अलावा उन्हें अपने समय की समस्याओं को सावधानी से **समझना** चाहिए। जहां विधि शासन सामाजिक न्याय के दरवाजे बंद कर देता है, वहां कुचले हुए वर्ग सड़कों पर अपनी समस्या को हल करने का प्रयत्न करेगा। हमारे संविधान निर्माता सीधी कार्यवाही से बेखबर नहीं थे। हमारे देश में आधारभूत न्याय काफी समय तक नहीं किया गया था और वास्तविक समता की कल्पना इस प्रकार की गई थी जैसे उसके अंतर्गत समान करने का अवसर भी सम्मिलित हो। संविधानिक विधि के आलोचनात्मक अध्ययन करने से ही सही परिणाम निकल सकेंगे।

(ए.आई. आर. 976 सु. के 790 पृष्ठ 529- 530)
(1976) उम. नि. प. 936 पृष्ठ 1050, 1051,
न्यायाधिपति कृष्ण अय्यर)

मानवीय दृष्टि से रुकावट से ग्रसित व्यक्तियों और पुरातन काल से सामाजिक दृष्टि से अलगाव की स्थिति में रहनेवाले व्यक्तियों का उद्धार राज्य द्वारा सृजनात्मक और कानून द्वारा कदम उठाए जाने से अवधारित हो सकता है, न कि समानता की घोषणाओं के द्वारा। कमजोर के भाग्य में सकारात्मक रूप से विभेद करने से विधि के समक्ष कभी-कभी असली समानता की वृद्धि हो सकती है- जैसा कि एन्थोनी लेसर ने 1970 में व्हाट इज रांग विद ला (विधि में क्या कमी है) बी.बी. सी भाषण माला में दलील दी थी। जो भाषण पुस्तक के रूप में छापा गया जिसका सम्पादन माइकिल बी.बी. सी ने 1970 में किया और जो **माडर्न** ला रिब्यू सितम्बर, 1970 जिल्द 33 के पृष्ठ 379 और 580 पर प्रौद्धत किया है। शेर और बैल के लिए एक ही विधि अत्याचार के समान है या जैसा अनातोले फ्रांस ने एक दूसरे युग में कहा है, कानून की अपनी प्रतापी समानता द्वारा धनवान एवं गरीब को पुलों के अन्दर सोने का निषेध है। उन्हें भीख मांगने और खेती चराने की रोक है। पिछड़े समुदाय के प्रति समान रूप से बंटवारे के न्याय में प्रभावकारी सुधारों पर जोर दिया गया है जिसमें न्यूनतम स्तर वाले और लुटे हुए के बीच समान साझेदारी की भावना पैदा करना प्रकल्पित है। यह कार्य राज्य की कार्यवाही द्वारा लघु और दीर्घकालीन सामाजिक योजना बनाए जाने और उसके क्रियान्वित किए जाने के प्रभावशाली तरीके से प्रकल्पित है। असमान सामाजिक आर्थिक स्थिति में अवसर समता और विकास का सुख मुश्किल से ही प्राप्त हो सकता है और मानव शक्ति के स्रोतों से

सर्वोत्तम प्राप्त होना भी कठिन ही है। अब हम असंतुष्ट जीवन के क्षेत्र से स्पष्ट होने वाली बातों को विधि में स्वीकार कर रहे हैं।

किसी वर्ग के प्रभुत्व के पश्चात और शासितों की असहाय अवस्था की लम्बी अवधि के पश्चात जागृति आती है और प्रोटेस्टों के समान विरोध होता है और पूर्व (थिसिस) अर्थात यथा स्थिति और पूर्व पक्ष के विपरित (एण्टी थीसिस) अर्थात समान स्थिति में पहुंचने की चाह से समन्वय की नई शक्तियां जागृत है, अर्थात साम्य पूर्ण संवैधानिक व्यवस्था या न्यायपूर्ण समाज हमारे संविधान निर्माता आध्यात्मिक सूक्ष्म दृष्टि रखते थे और वे इतिहास के भौतिकवादी निर्वचन से प्रभावित थे। उन्होंने ऐसा सामाजिक पूर्वानुमान लगा लिया था और ऐसे आर्थिक आंदोलनों की पेशबंदी कर दी थी और हमें तीन प्रकार के वचन उपलब्ध कराए। न्याय, सामाजिक, आर्थिक, और राजनीति "समानता संबंधी अनुच्छेद" इस स्कीम के भाग है। आयोग की प्रस्थापना यह है कि यदि अनुच्छेद 16(1) और (2) के सुसंगत उपबन्धों में दो आनुकल्पिक अर्थ दिए गए हों तो न्यायालय को भाषा का निर्वचन इस प्रकार करना चाहिए जिससे अप्रिय और हीनता की भावना का दोष हटाया जा सके जिसके कारण भारतीय राज्य शासन को अनुबांधिक रूप से हानि पहुंची है और जिसके द्वारा दोष का परिहार किया जा सके और सुधार की दशा में प्रगति हो सके और ऐसा समाजशास्त्र और सामाजिक मानवशास्त्र के सिद्धांतों के आधार पर किया जाना चाहिए। आयोग की कसौटी यह है कि क्रियाशील प्रजातंत्र में जनता के सभी वर्गो की हिस्सेदारी की परिकल्पना की गई है। उसमें प्रशासन में उचित प्रतिनिधित्व को ऐसे हिस्सेदारी का सूचक माना जा सकता है।

न्यायाधिपति ब्रेनन ने थोड़े से भिन्न सामाजिक वातावरण में निम्नलिखित शब्द कहे हैं :-

लिंकन ने यह कहा है कि "स्वाधीनता की भावना से इस देश का जन्म हुआ है और यह देश इस प्रस्थापना के लिए समर्पित है कि सभी व्यक्ति समान है"।**संस्थापकों**का ऐसे समाज के बावत स्वप्न जहां सभी व्यक्ति स्वतंत्र और समान है, पूरा किया जाना सरल नहीं रहा है। स्वतंत्रता और समानता का जो स्तर आज है, वह लगातार संघर्ष और त्याग का परिणाम है। बहुत कुछ किए जाने के लिए शेष है इतना अधिक कि हमारे समाज की संस्थाओं पर ही आक्षेप किया जाने लगा है। अतः आज जैसे कि लिंकन के समय में कोई व्यक्ति यह पूछ सकता है कि क्या यह दोष या कोई दोष जिसकी इस प्रकार परिकल्पना की गई है और जो इस प्रकार समर्पित है, लम्बे समय तक टिक सकेगा। हमारी आधारभूत दस्तावेजों में स्वाधीनता, न्याय, और समानता, समाविष्ट गारण्टी से कम **पड़ने** पर यह दोष टिक नहीं सकता। किन्तु यह उस दशा में भी नहीं बच सकता, यदि व्यवस्थित स्वाधीनता की हमारी बहुमूल्य विरासत वर्तमान समय के शोरगुल में काट कर नष्ट कर दी जाती है या उस दशा में

भी बनी नहीं रह सकती यदि व्यक्तिगत मामलों में एक और सामाजिक शांति और व्यवस्था के दावे और दूसरी और वैयक्तिक स्वाधीनता के दावे आपस में ऐसे फोरम में तय नहीं किए जा सकते है जिसकी संकल्पना संविधान के द्वारा की गई है। यदि न्यायालय में न्यायिक विवरण द्वारा वह संकल्प पूरा नहीं किया जा सकता तो वह अन्य किसी जगह अन्य साधनों से नष्ट किया जाएगा और इतनी गंभीरता उत्पन्न हो जाएगी कि दोनों के लिए अत्यावश्यक स्वाधीनता, समानता और व्यवस्था समाप्त हो जाएगी। (इलिनायस व एल्लन) 197 यू.एस. 337 (1970) वाले मामले में न्याय ब्लैक द्वारा बहुमत की ओर से दी गई राय से सहमति व्यक्त करते हुए **न्यायाधीश** ब्रेनन का मत)

न्यायशास्त्र कर्मशील होने के लिए भंगी कालोनी और ब्लेक थेटों के प्रति बुद्धिमत्ता से अनुकूल हल अपनाना चाहिए जिससे सामाजिक क्षेत्र, राजनैतिक और आर्थिक व्यवस्था के भीतर अवसरों की समता उपलब्ध कराई जा सके। ऐसा लम्बे समय से उन्हें वंचित किए जाने से हुई कमी की पूर्ति करके किया जाना चाहिए। अतः यदि न्यायालय को यह विश्वास हो जाये कि ऐसे अध्युपाय का प्रयोजन, जिसके द्वारा शंकास्पद वर्गीकरण वास्तव में बहुत हल्का है अर्थात अध्युपाय समाज को सभी जनजातियों और समूहों, और समुदायों के लिए समान स्थिति प्राप्त करने के लिए प्रकल्पित है और प्रपत्र उस कार्यक्रम के एक के तौर पर वर्गीकरण का उपयोग करने के लिए है तो वह राज्य को ऐसा करने के लिए साधनों को चुनने की अनुमति न्याय संगत रूप से तब तक दे सकता है जब तक कि चुने गये साधन उस उद्देश्य को प्राप्त करने से युक्तियुक्त रूप से संबंधित हो। व्यापक अर्थ में चूंकि समाज इन पश्चातवर्ती दशाओं के लिए जिम्मेदार है, अतः उसका यह कर्तव्य भी है कि वह व्यक्तियों के बीच उन्हें सुसंगत अन्तर माने और जब कभी उनके द्वारा अन्य नागरिकों द्वारा उपभोग किए गए आधारभूत न्यूनतम लाभों तक पहुंचने में समान रूप से बाधा पड़े तो समान होने वाली हानि की पूर्ति करे। एक अर्थ में इस सिद्धांत द्वारा राज्य कार्यवाही की पारम्परिक विचारधारा व्यापक बनाता है। जिसके द्वारा राज्य से उन असमानताओं के प्रति ध्यान देने की अपेक्षा की जाती है जिसके लिए राज्य प्रत्यक्ष रूप से जिम्मेदार नहीं है किन्तु जो संगठित राज्य के अस्तित्व के लिए सहभोगी तत्व है। मैं हार्वज ला रिव्यू 1968, 1969, जिल्द 82 से डेवलपमेन्टस इन दिलाइक्वल प्रोटेक्शन नामक लेख से उद्धरण नीचे दे रहा हूं "उदाहरण के लिए राज्य अर्हता संबंधी परीक्षाओं से जातीय समूहों को छूट देने का विनिश्चय कर सकता है या ऐसी परीक्षाओं में जातीय आधार पर कुछ रियायतें दे सकता है जो अक्सर अनुभवी व्यक्तियों को दी जाती है। पृष्ठ (1105-1106")

जहां जातीय वर्गीकरण भूतकालीक एवं सतत् चालू जातीय विभेद से उद्भूत होने वाले बचनों को दूर करने के लिए बाह्य रूप से प्रयुक्त किए जाते हैं वहां न्यायालय पुनरीक्षण के कठोर मानदंड द्वारा अनुज्ञेय या ताकि मानदंडों द्वारा अध्यायों को अधिनिर्णित करना उचित समझ सकता है

संभवतः नियामक अध्युपायों के संविधानिक मूल्यांकन में मामूली तौर पर अनुज्ञेय या तार्किक मानदंडों द्वारा।

"फिर भी यदि जातीय वर्गीकरण या कुछ नकारात्मक शैक्षिय प्रभाव हो, वर्गीकरण इतने प्रभावशाली हो सकते हैं कि इस बाधा के बावजूद उन्हें किया ही जाना चाहिए। यदि अध्युपायों से कालों को सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक व्यवस्था से प्राप्त होने वाले उन अवसरों में वृद्धि होती है जो मामूली तौर पर उन्हें उपलब्ध नहीं थे, तो मनुष्यों में अन्तर किए जाने से होने वाली हानि से उनका मूल्य अधिक ही होगा। यह हो सकता है कि श्वेत व्यक्तियों के साथ-साथ काले व्यक्तियों का वास्तव में भाग लेना अन्ततः बहुत महत्वपूर्ण साबित होगा और इससे विभेद के विरुद्ध स्थायी शिक्षाप्रद प्रभाव पड़ेगा।

अतः यदि न्यायालय का यह विश्वास हो जाता है कि किसी जातीय वर्गीकरण का उपयोग करने वाले किसी अध्युपाय के प्रयोजन सचमुच में हल्के स्वरूप के हैं, अर्थात सभी जातियों के लिए समाज में समान स्थिति प्राप्त करने के लिए प्रकल्पित है तो उसके द्वारा राज्य को ऐसा करने के लिए साधनों को चुनने की मंजूरी देना तब न्यायसंगत होगा, जब तक कि चुने गए साधन उस ध्येय को प्राप्त करने के लिए उससे युक्तियुक्त रूप से संबंधित हो।

(केरल राज्य बनाम एन.एम. टामस- न्यायाधिपति कृष्ण अय्यर
ए.आई. 190 सु. को. 490) (1976) (2 उम. नि. प. 936)
(पृष्ठ 1070-1071)

"यदि न्यायालय के पास खास तौर पर भारतीय भूमि पर सुनने वाली चौकियां वास्तविक रूप में होती तो अवसर समता के आधार पर उसका निर्धारण विधि परायण या वैयक्तिक नहीं बना रह सकता किन्तु पीढ़ियों से चली आ रही असमानता को सुधारने के लिए जो वास्तव में असली समता का माध्यम है, हमारे संविधान की आदेशात्मक आज्ञा को वे अनुभव करते। स्टरलिंग टकरः की पुस्तक "फार ब्लैक्स **ओपनली** से इसमें निम्नलिखित भावना के प्रति न्यायिक दृष्टि जागृत होगी और इसलिए मैं उन शब्दों को उद्धृत करता हूं।

यदि श्वेत **अमेरिकियो** ने हमें मानव के रूप में देखना सीख लिया है, जो उनके समान है और जिनकी आज्ञा पर कोई वैयक्तिक बंधन नहीं है या जो डरे नहीं है तो उन्होंने हमारे आवेश और अवज्ञा की भावना को समझ लिया होगा। वे हमारी भावना के अनुरूप सुविधा देना चाह सकते और वे उसे समझ भी सकते थे। वे हमारे गौरव की आवश्यकता को समझ सकते थे और इस बात को भांप सकते थे कि हमारे लिए अश्वेत शक्ति का क्या अर्थ है किन्तु जैसा शब्द एलीऐन ने प्रभावशाली रूप

से मत व्यक्त किया है कि उन्होंने वास्तव में कभी भी हमें देखा नहीं है। मैं एक अदृश्य मनुष्य हूं। मैं हाड़ मांस युक्त मनुष्य हूं जिसमें तन्तु और तरल रक्त है और मेरे बारे में यह भी कहा जा सकता है कि मेरे पास दिमाग भी है।

इसका कारण केवल यह है कि जनता मुझे **मनुष्य** के तौर पर देखने से इंकार करती है। तब से मेरे पास आते हैं तो केवल मेरे परिपार्श्व को ही देखते हैं। वे या तो स्वयं को देखते हैं या अपनी काल्पनिक वस्तु देखते हैं। वास्तव में, हर वस्तु में हर जगह मेरे सिवाय और जाते देखते हैं, में जिस अदृश्यता के प्रति निर्देश कर रहा हूं, वह उन व्यक्तियों की आंखों की विचित्र वृत्ति के कारण है जिनके मैं संपर्क में आता हूं। उनकी ऐसी अन्तदृष्टि की बनावट के कारण होता है। वे आंखें जिनसे वे वास्तविकता को अपनी मौखिक आंखों के माध्यम से देखते हैं।.....

आपको आश्चर्य होगा कि क्या वे दूसरे व्यक्तियों के मस्तिष्क में केवल वहम् (भूत) ही नहीं है। .... तुम अपने को यह विश्वास दिलाने के कष्ट से दुखी हो कि तुम वास्तविक दुनिया में रहते हो और तुम सभी ध्वनि और दर्द के एक भाग हो और घूंसे के प्रहार करते हो, तुम धिक्कारते हो और यह कि तुम शपथ लेते हो कि तुम उन्हें ऐसा बना दोगे जिससे वे तुम्हें मान्यता देंगे और हाय ऐसा यदा-कदा ही होता है।

"संविधान के अनुच्छेद 16 (4) और 335 का इस क्रम पर पुनः उल्लेख करना उचित होगा।"

अनुच्छेद 16 (1) राज्याधीन नौकरियों या पदों पर नियुक्ति के संबंध में सब नागरिकों के लिए अवसर की समता होगी।

(2) केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, उद्भव, जन्मस्थान, निवास अथवा इनमें से किसी के आधार पर किसी नगारिक के लिए राज्याधीन किसी नौकरी या पद के विषय में न अपात्रता की किसी बात से संसद को कोई ऐसी विधि बनाने में बाधा न होगी जो प्रथम अनुसूचि में उल्लिखित किसी राज्य के अथवा उसके राज्य क्षेत्र में किसी स्थानीय या अन्य प्राधिकारी के अधीन किसी प्रकार की नौकरी में या पद पर नियुक्ति के विषय में वैसी नौकरी या नियुक्ति के पूर्व उस राज्य के अन्दर निवास विषयक कोई अपेक्षा विहित करती हो।

(5) इन अनुच्छेदों की किसी बात का किसी ऐसी विधि के प्रवर्तन पर कोई प्रभाव न होगा जो उपबन्ध करती हो किसी धार्मिक या सांप्रदायिक संस्था के कार्य से सम्बद्ध कोई पदधारी अथवा

उसके शासी निकाय का कोई सदस्य किसी विशिष्ट धर्म का अनुयायी अथवा किसी विशिष्ट संप्रदाय का ही हो।

अनुच्छेद 46 :- राज्य जनता के दुर्बलतर **वर्ग** के विशेषतया अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम जातियों के शिक्षा तथा अर्थ संबंधी हितों की विशेष सावधानी से उन्नति करेगा तथा सामाजिक अन्याय तथा सब प्रकारों के शोषण से उनका संरक्षण करेगा।

अनुच्छेद 335 :- संघ या राज्य के कार्यों में संसक्त सेवाओं और पदों के लिए नियुक्तियां करने में प्रशासन कार्यपटुता बनाए रखने की संगति के अनुसार अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों के सदस्यों के दावों का ध्यान रखेगा।

निस्संदेह यह बात सच है कि अनुच्छेद 16 (1) राज्याधीन सेवाओं में सभी नागरिकों के लिए अवसर समता के लिए उपलब्ध किया गया है किन्तु यह सुस्थित हो चुका है कि अनुच्छेद 16 (1) में अंतर्विष्ट सिद्धांत जीती-जागती वास्तविकता है और रचनात्मक संकल्पना है ना कि मात्र कड़ा नियम का खोखला फार्मूला। उच्चतम न्यायालयों की अनेक जंजीरों द्वारा यह बात समान रूप से सुस्थिर हो चुकी है कि अनुच्छेद 16, अनुच्छेद 14 का मात्र आनुषंगिक है, अनुच्छेद 14 का, जो कि जाति है, उपयोग सामान्य रूप से किया जाता है, जबकि अनुच्छेद 16 उप-जाति है और उसके द्वारा राज्याधीन सेवाओं में अवसर समता प्राप्त करना ईप्सित है। युक्तियुक्त वर्गीकरण का सिद्धांत समता की संकल्पना में विवक्षित है और अन्तर्निहित है, क्योंकि नागरिक सभी पहलुओं में समान हों। अवसर समता से, स्वाभाविक रूप से न केवल एक वर्ग या अन्य वर्ग के लिए, बल्कि सभी वर्गों के लिए बाधाएं हटा कर उस दशा में उचित अवसर अभिप्रेत है, यदि समाज के विशिष्ट वर्ग में उस तरह की बाधा मौजूद है। उच्चतम न्यायालय तथा विभिन्न उच्च न्यायालयों ने अपने जो भी निर्णय दिए हैं, उनमें कभी भी इस संबंध में कोई विवाद नहीं उठाया गया है कि अनुच्छेद 14 के अधीन युक्तियुक्त वर्गीकरण के लिए अनुज्ञात नहीं किया गया है। किन्तु अनुच्छेद 14 या अनुच्छेद 16 जिस बात को निषिद्ध करता है, वह अत्यधिक विभेद है ना कि युक्तियुक्त वर्गीकरण इन शब्दों में वर्गीकरण का विचार समता की संकल्पना में विवक्षित है, क्योंकि समता से सभी की समता अभिप्रेत है न कि समाज के उच्चतर और शिक्षित वर्गों की समता। अतः इससे यह अर्थ निकलता है कि हमारे देश के सभी नागरिकों को समता का अवसर देने की दृष्टि से नागरिकों के प्रत्येक वर्ग को समतावादी समाज का निर्माण करने में समान रूप से हैं और समृद्धि होती है जहां कि पूरी तरह आर्थिक स्वतंत्रता होती है और जहां कि निर्धनता की दुर्गन्ध नहीं आती, तथा जहां कोई विभेद नहीं होता या शोषण नहीं होता, जहां कि शिक्षा के लिए कार्य करने के लिए अपनी आजीविका का उपार्जन करने के समान अवसर

होते हैं जिससे कि सामाजिक न्याय का उद्देश्य प्राप्त हो सके। क्या हम समाज के मजबूत तथा अधिक उन्नत वर्गों को फायदा होते हुए, अधिक पिछड़े हुए वर्गों की एकमात्र इसलिए उपेक्षा कर सकते हैं क्योंकि वे निश्चित स्तर पर खरे नहीं उतर सकते। ऐसे तरीके के परिणाम स्वरूप पिछड़े हुए वर्गों को अवसर से वंचित कर दिया जाएगा और उसका परिणाम यह होगा कि अनुच्छेद 14 और 16 में अन्तर्विष्ट समता की संकल्पना पूरी तरह नष्ट हो जायेगी। जिस एक मात्र रीति से हमारे संविधान निर्माताओं द्वारा यथा अनुध्यात तथा अनुच्छेद 14 और 16 में समाविष्ट समता का उद्देश्य प्राप्त किया जा सकता है, वह पिछड़े वर्गों को रियायतें, सुविधाएं, प्रसुविधाएं देकर और उनकी बाधाओं वर्ग को हटाकर और उपयुक्त आरक्षण देकर उन्हें ऊंचा उठाना है जिससे कि लोगों के अधिक कमजोर वर्गों अधिक उन्नत वर्गों का मुकाबला कर सकें और, समय के सम्यक अनुक्रम में सभी समान हो सके तथा सदा के लिए पिछड़ापन समाप्त हो जाए। यह बात तभी हो सकती है, जबकि हम पूरी तरह से आर्थिक और सामाजिक स्वतंत्रता प्राप्त कर सकें। उच्चतम न्यायालय इस मामले पर **एकमत** है कि निर्देशक तत्वों और मूलाधिकारों का अर्थान्वयन एक दूसरे से सांमजस्य करके किया जाना चाहिए। भाग-4 में अन्तर्विष्ट निर्देशक तत्व, समाजवादी राज्य के उच्च भवन पर चढ़ने के सोपान हैं और मूल अधिकार उसके साधन हैं जिनके जरिए से कोई भी व्यक्ति भवन की अंतिम मंजिल पर पहुंच सकता है।

संविधान का समादेश लोक कल्याणकारी समाज का निर्माण करना है जिसमें सामाजिक, आर्थिक और जीवन की सभी संस्थाओं को अनुप्रमाणित करेगा। संविधान द्वारा हमारे लिए उद्बोधित आशाएं और उच्चाकांक्षाएं पूरी नहीं उतरेगी यदि हमारे निम्नतम नागरिकों की न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं की जाती है।

भारतीय संविधान एक महान सामाजिक दस्तावेज है जिसका उद्देश्य एक मध्यकालीन पदस्थ परम्परायुक्त समाज को आधुनिक और समतावादी प्रजातंत्र में परिवर्तित करने का क्रांतिकारी उद्देश्य है। संविधान के उपबन्धों को व्यापक सामाजिक वैज्ञानिक दृष्टिकोण से ही समझा जा सकता है ना कि किताबी पारम्परिक विधिवादिता द्वारा।

हमारे संविधान का लक्ष्य उन व्यक्तियों सहित जो कि सामाजिक, आर्थिक और शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं, सब नागरिकों को हैसियत की समता और अवसर-समता प्रदान करना है। पिछड़े वर्गों के सदस्यों के दावे विधायी और कार्यपालिक निकायों में पर्याप्त प्रतिनिधित्व की अपेक्षा करते हैं। यदि अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों पिछड़े वर्गों के वे सदस्य, जिन्हें न्यायालय द्वारा पिछड़े वर्गों के सदस्य कहा गया है, प्रशासनिक दक्षता की न्यूनतम अनिवार्य अपेक्षा रखते हैं तो

समता कायम रखने के लिए असमता को समाप्त करने के लिए न केवल प्रतिनिधित्व ही अपितु उन्हें अधिनाम भी दिया जाना चाहिए। अनुच्छेद 15 (4) और 16(4) पिछड़े वर्गों की समानता दिए जाने की स्थिति स्पष्ट करते हैं। पिछड़े वर्गों के विकास के लिए उनका पर्याप्त प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने के लिए नियुक्तियों और पदों के आरक्षण के लिए विशेष उपबन्ध किए गए हैं। ये उपबन्ध अनुच्छेद 14-15 (1) और 16 (1) में गारंटी कृत समता की अर्न्तवस्तु को स्पष्ट करेंगे। समता को आधार भूत धारणा नियुक्ति के लिए अवसर समता है। प्रशासनिक दक्षता को संपर्क रूप से ध्यान में रखते हुए पिछड़े वर्गों के सदस्यों के साथ अधिमानी व्यवहार का ही अर्थ सब नागरिकों के लिए अवसर समता हो सकती है। अनुच्छेद 14 के अधीन समता की अर्न्तवस्तु अनुच्छेद 14 के अधीन समता से भिन्न नहीं हो सकती। असमानों के लिए अवसर समता का अर्थ केवल असमानता को बढ़ाना ही हो सकता है। अवसर समता तर्क सहित विभेद अनुज्ञात करती है और तर्क के बिना विभेद का प्रतिवेध करती है। तर्क सहित विभेद से विभेद पूर्ण व्यवहार के लिए तर्क संगत वर्गीकरण अभिप्रेत है जिसका किसी विधानिक रूप से अनुज्ञेय उद्देश्य के साथ संबंध हो। प्रशासनिक **दक्षता** को संपर्क रूप से ध्यान में रखते हुए सेवाओं में पिछड़े वर्गों का अधिमानी प्रतिनिधित्व अनुज्ञेय उद्देश्य है और पिछड़े वर्गों का वर्गीकरण तर्कसंगत वर्गीकरण है जिसे हमारे संविधान द्वारा मान्यता दी गई है। अतः चयन के स्तरों में भेदपूर्ण व्यवहार समता की धारणा के भीतर आता है।

"प्रशासन की दक्षता की आधारभूत आवश्यकताओं को **विनिर्दिष्ट** करते हुए न्यून प्रतिनिधित्व वाले पिछड़े समुदाय के पक्ष में बनाया गया कोई नियम अनुच्छेद 14, 16 (1) और 16 (2) का उल्लंघन नहीं करेगा।

(केरल राज्य बनाम एन.एम. टामस) मुख्य न्यायाधिपति रे
ए.आई.आर. 1976 सु. को. 4902) (1976) 2 उम. नि. प. 936
पृष्ठ 986-987)

विभेद वर्गीकरण का सार होता है। उस दशा में समता का अतिक्रमण होता है, जब कि उसका आधार अयुक्तियुक्त हो। समता की धारणा में अन्तर्निहित परिसीमा उत्पन्न होती है। वे व्यक्ति जो समान परिस्थितियों में हो, समान व्यवहार के हकदार होंगे। समता समान व्यक्तियों के बीच होती है। अतः वर्गीकरण सारवान में रखे गए व्यक्तियों को उस समूह से छूटे हुए व्यक्तियों से प्रभेदित करता हो और ऐसे भेदभावपूर्ण व्यवहार को प्राप्त किये जाने वाले उद्देश्य से न्यायपूर्ण और तर्कसंगत होना चाहिए।

"समता सिद्धांत समान परिस्थितियों में समान व्यक्तियों के साथ समान व्यवहार है। विभेद का

सिद्धांत भिन्न-भिन्न स्थितियों में विभिन्न व्यक्तियों या वस्तुओं के बीच विभेद करने वाली विधियां अधिनियमित करता है। जो परिस्थितियां व्यक्तियों या वस्तुओं के एक वर्ग को लागू होती है, आवश्यक रूप से वैसी ही नहीं ही सकती है जो व्यक्तियों के बीच या वस्तुओं के एक अन्य वर्ग को लागू नहीं होती जिससे कि विभिन्न स्थितियों और विभिन्न परिस्थितियों द्वारा शासित होना उत्पन्न नहीं होता है। समता के सिद्धांत से यह अभिप्रेत नहीं है कि प्रत्येक विधि उन सभी व्यक्तियों को सार्वजनिक रूप से लागू होनी चाहिए जो कि प्रकृति, योग्यता या परिस्थितियों के कारण जैसी स्थिति में नहीं है और व्यक्तियों के विभिन्न वर्गों को भिन्न-भिन्न जरूरतें विशेष व्यवहार की अपेक्षा करती है। विधान मण्डल अपनी जनता की जरूरतों को समझता है और यह जानता है कि उसकी विधियां अनुभव द्वारा प्रकट की गई समस्याओं के हल के लिए है उसके प्रभेद उचित आधारों पर आधारित है। वर्गीकरण का सिद्धांत समता के सिद्धांत का स्वाभाविक और तार्किक अनिवार्य परिणाम नहीं है किन्तु विभेद का सिद्धांत समता की धारणा में अन्तर्निहित है। समता से एक जैसी दशाओं में समान व्यवहार अभिप्रेत है। समता आत्यान्तिक समता की द्योतक नहीं है। किसी वर्गीकरण को संविधानिक होने के लिए ऐसे प्रभेदों पर आश्रित होना चाहिए जो कि सारवान है न कि केवल काल्पनिक है। कसौटी यह है कि क्या कृत्रिमता और मनमानेपन से मुक्त इसका कोई युक्तियुक्त आधार है जो कि उस प्रवर्ग में स्वाभाविक रूप से आने वाले सभी व्यक्तियों को लागू होता है और किसी को छोड़ता नहीं है।

(केरल राज्य बनाम एन. एम. टामस) मुख्य न्यायाधिपति रे
ए.आई.आर. 1976) सु. को. 490 (1976) उम. नि. प. 936
पृष्ठ 9 क)

संविधान निर्माता जनता के अधिकांश वर्गों के पिछड़ेपन के बारे में जागरुक थे। यह भी स्पष्ट है कि उनके पिछड़ेपन के कारण जनसंख्या के वे वर्ग समाज के उन उन्नत वर्गों के साथ प्रतिस्पर्धा करने की स्थिति में न होंगे जिन्हें समृद्धि और बेहतर शिक्षा की सभी सुविधाएं प्राप्त है। यह तथ्य कि प्रतिस्पर्धा के दरवाजे उनके लिए भी खुले हुए थे, पिछड़े हुए वर्गों के सदस्यों के लिए संतुष्टि मात्र होता, क्योंकि प्रतिस्पर्धा में उनकी सफलता के अवसर उन अन्तर्निहित कमियों और असुविधाओं का परिणाम यह होता कि कुछ आपवादिक मामलों को छोड़कर पिछड़े हुए वर्गों के सदस्यों को उन नौकरियों में मुश्किल से ही कोई प्रतिनिधित्व मिल पाता, जिनमें शैक्षणिक पृष्ठभूमि अपेक्षित है। इस प्रकार यह वस्तुतः उन व्यक्तियों का दमन करना होता है जो पहले से ही शोषित है। चूंकि संविधान निर्माता उन असुविधाओं के बारे में जागरुक थे, जिससे पिछड़ा वर्ग ग्रस्त था, इसलिए उन्होंने संविधान के अनुच्छेद 46 में राज्य से यह अपेक्षा की कि वह जनता के दुर्बलतर विभागों के विशिष्ट तथा अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के शिक्षा तथा अर्थ संबंधी हितों की विशेष सावधानी से उन्नति करेगा तथा सामाजिक अन्याय तथा सब प्रकारों के शोषण से उनका संरक्षण

करेगा। लोक नियोजन के क्षेत्र में उस उद्देश्य को कार्यरूप देने के लिए अनुच्छेद 16 के खण्ड़ (4) मे एक उपबन्ध किया गया था कि इस अनुच्छेद की किसी बात के राज्य को पिछड़े हुई किसी नागरिक वर्ग के पक्ष में, जिनका प्रतिनिधित्व राज्य की राय में राज्याधीन सेवाओं में पर्याप्त नहीं है, नियुक्तियों या पदों के रक्षण के लिए उपबन्ध करने में कोई बाधा न होगी। और उस दशा में जिसमें राज्य यह पाता है कि राज्याधीन नौकरियों में पिछड़े हुए वर्ग के नागरिकों का प्रतिनिधित्व पर्याप्त नहीं है। यह उस पिछड़े हुए वर्ग के नागरिकों के पक्ष में नियुक्ति या पदों के आरक्षण के लिए उपबन्ध बना सकता है।

संविधान के उपबन्धों का अर्थ लगाने में हमें सैद्धांतिक दृष्टिकोण से बचना चाहिए। संविधान राष्ट्रीय जीवन की गाड़ी है और वह सरकार की व्यवहारिक समस्याओं का उल्लेख करता है।

जनता के इन वर्गों का पिछड़ापन हमारी समाजिक पद्धति पर कलंक है और इसे समाप्त करना होगा, जैसा कि संविधान के अनुच्छेद 46 में परिलंबित है। इन वर्गों के व्यक्तियों की अतीत की उपेक्षा और शोषण का अन्त करने के लिए कुछ ठोस कदम उठाने की तुरंत आवश्यकता हो सकती है ताकि उन्हें आम जनता के उन्नत वर्गो की समानता के आधार पर, जो वास्तविक और कारगर हो, लाया जा सके। राज्य के अनुच्छेद 16 के खंड-4 के अधीन पिछड़े हुए किसी नागरिक वर्ग के लिए नियुक्तियों का पदों के आरक्षण का उल्लेख करता है जिनका प्रतिनिधित्व राज्य की राय में राज्याधीन सेवा में पर्याप्त नहीं है। हमारी राय में अनुच्छेद 16 के खण्ड-4 के अधीन राज्य की निष्क्रियता के कारण अनुच्छेद 16 (1) के खण्ड (1) को अस्वाभाविक अर्थान्वयन न्यायोचित नहीं ठहराया जा सकता है।

लोक नियोजन के क्षेत्र में योग्यता, सेवा की कार्य-कुशलता की सर्वोच्चता और विभेद के अभाव के आदर्श स्पष्ट रूप से समाप्त हो जायेंगे, यदि हम एक बार यह स्वीकार कर लें कि अनुच्छेद 16 के खण्ड (4) द्वारा अपेक्षित सिद्धांतों से परे महत्वपूर्ण सिद्धांतों का भी अतिक्रमण किया जा सकता है।

विभिन्न लेखक समता के एक प्रकार को दूसरे प्रकार की तुलना में अधिक महत्व देते हैं जैसे कि- विधि के समक्ष समता, आधारभूत मानवीय अधिकारों की समता, आर्थिक समता अवसर समता या सभी व्यक्तियों के लिए विचार की समता।

औपचारिक समता सभी व्यक्तियों को समान मानकर प्राप्त की जा सकती है। "प्रत्येक व्यक्ति

को एक गिना जाता है और किसी को भी एक से अधिक नहीं गिना जाता है"। किन्तु व्यक्ति सभी पहलुओं में एक समान नहीं है। समता का दावा वस्तुतः अन्यायपूर्ण अवांछित और अन्यायोचित असमताओं का विरोध है। यह संभावित आकस्मिक समता अन्यायपूर्ण शक्ति और स्पष्ट विशेषाधिकारों के विरुद्ध मानव का विद्रोह है। यद्यपि समता प्रदान करने का विनिश्चय वाह्य रूप से अभिकथित कारण से प्रेरित होता है कि सभी व्यक्ति एक समान हैं तो भी जैसे ही हम नैतिक अर्थ में भ्रांति को दूर कर लेते हैं, हमें यह अहसास हो जाता है कि विपरीत बात सत्य है, क्योंकि हमारे विचार में उचित रूप से इस कमी को पूरा करने के लिए व्यक्ति वास्तव में भिन्न-भिन्न ही पैदा होते हैं, कुछ समताओं का संप्रवन किया गया है। अतः हमें न्याय प्राप्त करने के लिए कई पहलुओं में किसी प्रकार की आनुपातिक समता का आश्रय लेना होता है।

आनुपातिक समता का सिद्धांत केवल तभी पूरा होता है जबकि समान व्यक्तियों से असमानता का व्यवहार किया जाये। यह बात इस पेचीदा प्रश्न को उत्पन्न कर देगी किस बात में समान और असमान अतः आनुपातिक समता के सिद्धांत में एक ऐसी कसौटी अन्तर्विष्ट है, जिसके अनुसार भेदभावपूर्ण व्यवहार न्यायोचित होता है। यदि कोई ऐसा महत्वपूर्ण पहलू नहीं है, जिसमें व्यक्तियों को प्रभेदित किया जा सकता है, तो भेदपूर्ण व्यवहार अन्यायोचित होगा, किन्तु किसी बात को ऐसे महत्वपूर्ण भेद के रूप में अनुज्ञात किया जाना है, जो कि भेदभावपूर्ण व्यवहार को न्यायोचित ठहरायेगी।

किसी राज्य के पदों के वितरण में किसी प्रकार की वैयक्तिक समता सुसंगत नहीं होती है क्योंकि जब तक हम प्रश्नगत क्षेत्र में समुचित कसौटी को लागू न करें, यह प्रकट होगा कि किसी व्यक्ति का कद या उसका रंग -रूप किसी पद के लिए उसकी पात्रता या उपयुक्तता का अवधारण कर सकता है। जैसा कि अरस्तु ने कहा है। राजनैतिक पद पर दावे खेल की प्रतियोगिताओं में वीरता के आधार पर नहीं किये जा सके। उक्त पद के अभ्यार्थियों के पास **अर्हताये** होना चाहिए जिनसे कि उस पद का प्रभावशील उपयोग किया जा सकता है। किन्तु यह सिद्धांत भी इस प्रश्न का कोई समाधान प्रद उत्तर नहीं देता है, कि कब भेदपूर्ण व्यवहार किया जा सकता है। निस्संदेह इस सिद्धांत के संबंध में कोई अपवाद नहीं है कि यदि व्यक्तियों के साथ विभिन्न रूप से व्यवहार किया जा रहा है या भिन्न व्यवहार किया जाना है तो उनके बीच कुछ सुसंगत अंतर होना चाहिए। अन्यथा कुछ भेदपूर्व बातों के अभाव में एक का भोजन दूसरे के लिए जहर हो सकता है। वास्तविक कठिनाई यह ज्ञात करने में उत्पन्न होती है कि सुसंगत भेद क्या है?

यदि सबके साथ एक ही रीति से व्यवहार किया जाना है तो इसके साथ यह महत्वपूर्ण अपेक्षा

होनी चाहिए कि हम में से कोई भी पालन-पोषण और शिक्षा में किसी अन्य व्यक्ति की तुलना में अच्छा या खराब नहीं होना चाहिए जो कि ऐसी मानव जाति के,जैसे कि आजकल हम देखते हैं, लिए अप्राप्त आदर्श है। कुछ लोगों का विचार है कि अवसर समान की धारणा एक संतोषजनक धारणा है क्योंकि इसका पूर्ण निरूपण इसे मानव समाज के किसी भी रूप में असंगत बना देता है। उदाहरणार्थ शिक्षा के लिए अवसर समता को देखा जा संकता है। यह समता स्कूलों में प्रारंभ नहीं हो सकती है और इसलिए कुटुम्बों में एक समान व्यवहार की अपेक्षा करती है जो कि एक प्रकट अनाधि सम्भाव्यता है इस चीज को दूर करने के लिए सब बच्चों को राज्य के शिशु गृहों में पालन किया जाना चाहिए किन्तु इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए शिशु गृहों को पूर्णतः एक ही ढंग से चलाया जाना चाहिए। क्या हम इन परिस्थितियों में भी किशोरी को अवसर-समता की गारंटी दे सकते हैं।

हेराल्ड लास्की ने इस मत को अच्छी तरह से व्यक्त किया है :- "समता से दूसरी बात यह अभिप्रेत है कि सब व्यक्तियों के लिए पर्याप्त अवसर उपलभ्य हो। पर्याप्त अवसरों से हम इस अर्थ में समान अवसरों की विवक्षा नहीं कर सकते है कि इससे आरंभिक अवसर की समानता विवक्षित है। व्यक्तियों की जन्मजात प्रतिमाएं किसी भी तरह से समान नहीं होती। जो बच्चे, जिनका ऐसे वातावरण में पालन-पोषण किया जाता है, जहां कि बौद्धिक बातों को बहुत अधिक महत्व दिया जाता है, अवश्य ही ऐसे फायदों के साथ जीवन प्रारंभ करेंगे जो कि कोई भी विधान प्रदान नहीं कर सकता है। माता-पिता का चरित्र अनिवार्य रूप से उन बच्चों के गुणों को बहुत अधिक प्रभावित करेगा जो उनके संपर्क में आते हैं। इसलिए जब तक कुटुम्ब प्रयास करता है, और इस बात के न होने की प्रत्याशा का वांछा करने के लिए कोई कारण प्रतीत नहीं होता है वे भिन्न-भिन्न वातावरण जो कि वह सृजित करेगा, समान अवसरों की धारणा को बिल्कुल विलक्षण बना देंगे। (देखिए-ली देनवाटर) द्वारा संपादित सोशल प्रावलम्स एण्ड पब्लिक पालिसी- इनइक्वैलिटी एण्ड जस्टि" लिबर्टी एण्ड इक्वैलिटी पृष्ठ 26 से 31")

(इस अंश को न्यायाधिपति मैथ्यू ने, "केरल राज्य बनाम एन. एम. टामस" (सु. प्रा.) के निर्णय में उदधृत किया है, ए.आई. आर. 1976 सु. को. 490= (1976) 2 उम. नि.प. पृष्ठ 936 के पृष्ठ 1014)

अवसर समता की धारणा यह है कि कोई सीमित माल वस्तुतः उन आधारों पर आवंटित किया जाएगा जो कि निगम्य रूप से उनके किसी ऐसे वर्ग को अपवर्जित न करे जो उसकी वांछा करता हो। लोगों के सभी वर्ग देश की लोकसेवा में प्रतिनिधित्व की वांछा और उसका दावा करते हैं।

को एक गिना जाता है और किसी को भी एक से अधिक नहीं गिना जाता है"। किन्तु व्यक्ति सभी पहलुओं में एक समान नहीं है। समता का दावा वस्तुतः अन्यायपूर्ण अवांछित और अन्यायोचित असमताओं का विरोध है। यह संभावित आकस्मिक समता अन्यायपूर्ण शक्ति और स्पष्ट विशेषाधिकारों के विरुद्ध मानव का विद्रोह है। यद्यपि समता प्रदान करने का विनिश्चय वाह्य रूप से अभिकथित कारण से प्रेरित होता है कि सभी व्यक्तिं एक समान हैं तो भी जैसे ही हम नैतिक अर्थ में भ्रांति को दूर कर लेते हैं, हमें यह अहसास हो जाता है कि विपरीत बात सत्य है, क्योंकि हमारे विचार में उचित रूप से इस कमी को पूरा करने के लिए व्यक्ति वास्तव में भिन्न-भिन्न ही पैदा होते हैं, कुछ समताओं का संप्रवन किया गया है। अतः हमें न्याय प्राप्त करने के लिए कई पहलुओं में किसी प्रकार की आनुपातिक समता का आश्रय लेना होता है।

आनुपातिक समता का सिद्धांत केवल तभी पूरा होता है जबकि समान व्यक्तियों से असमानता का व्यवहार किया जाये। यह बात इस पेचीदा प्रश्न को उत्पन्न कर देगी किस बात में समान और असमान अतः आनुपातिक समता के सिद्धांत में एक ऐसी कसौटी अन्तर्विष्ट है, जिसके अनुसार भेदभावपूर्ण व्यवहार न्यायोचित होता है। यदि कोई ऐसा महत्वपूर्ण पहलू नहीं है, जिसमें व्यक्तियों को प्रभेदित किया जा सकता है, तो भेदपूर्ण व्यवहार अन्यायोचित होगा, किन्तु किसी बात को ऐसे महत्वपूर्ण भेद के रूप में अनुज्ञात किया जाना है, जो कि भेदभावपूर्ण व्यवहार को न्यायोचित ठहरायेगी।

किसी राज्य के पदों के वितरण में किसी प्रकार की वैयक्तिक समता सुसंगत नहीं होती है क्योंकि जब तक हम प्रश्नगत क्षेत्र में समुचित कसौटी को लागू न करें, यह प्रकट होगा कि किसी व्यक्ति का कद या उसका रंग -रूप किसी पद के लिए उसकी पात्रता या उपयुक्तता का अवधारण कर सकता है। जैसा कि अरस्तु ने कहा है। राजनैतिक पद पर दावे खेल की प्रतियोगिताओं में वीरता के आधार पर नहीं किये जा सके। उक्त पद के अभ्यार्थियों के पास **अर्हताये** होना चाहिए जिनसे कि उस पद का प्रभावशील उपयोग किया जा सकता है। किन्तु यह सिद्धांत भी इस प्रश्न का कोई समाधान प्रद उत्तर नहीं देता है, कि कब भेदपूर्ण व्यवहार किया जा सकता है। निस्संदेह इस सिद्धांत के संबंध में कोई अपवाद नहीं है कि यदि व्यक्तियों के साथ विभिन्न रूप से व्यवहार किया जा रहा है या भिन्न व्यवहार किया जाना है तो उनके बीच कुछ सुसंगत अंतर होना चाहिए। अन्यथा कुछ भेदपूर्व बातों के अभाव में एक का भोजन दूसरे के लिए जहर हो सकता है। वास्तविक कठिनाई यह ज्ञात करने में उत्पन्न होती है कि सुसंगत भेद क्या है?

यदि सबके साथ एक ही रीति से व्यवहार किया जाना है तो इसके साथ यह महत्वपूर्ण अपेक्षा

होनी चाहिए कि हम में से कोई भी पालन-पोषण और शिक्षा में किसी अन्य व्यक्ति की तुलना में अच्छा या खराब नहीं होना चाहिए जो कि ऐसी मानव जाति के,जैसे कि आजकल हम देखते हैं, लिए अप्राप्त आदर्श है। कुछ लोगों का विचार है कि अवसर समान की धारणा एक संतोषजनक धारणा है क्योंकि इसका पूर्ण निरूपण इसे मानव समाज के किसी भी रूप में असंगत बना देता है। उदाहरणार्थ शिक्षा के लिए अवसर समता को देखा जा सकता है। यह समता स्कूलों में प्रारंभ नहीं हो सकती है और इसलिए कुटुम्बों में एक समान व्यवहार की अपेक्षा करती है जो कि एक प्रकट अनाधि सम्भाव्यता है इस चीज को दूर करने के लिए सब बच्चों को राज्य के शिशु गृहों में पालन किया जाना चाहिए किन्तु इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए शिशु गृहों को पूर्णतः एक ही ढंग से चलाया जाना चाहिए। क्या हम इन परिस्थितियों में भी किशोरी को अवसर-समता की गारंटी दे सकते हैं।

हेराल्ड लास्की ने इस मत को अच्छी तरह से व्यक्त किया है :- "समता से दूसरी बात यह अभिप्रेत है कि सब व्यक्तियों के लिए पर्याप्त अवसर उपलभ्य हो। पर्याप्त अवसरों से हम इस अर्थ में समान अवसरों की विवक्षा नहीं कर सकते है कि इससे आरंभिक अवसर की समानता विवक्षित है। व्यक्तियों की जन्मजात प्रतिमाएं किसी भी तरह से समान नहीं होती। जो बच्चे, जिनका ऐसे वातावरण में पालन-पोषण किया जाता है, जहां कि बौद्धिक बातों को बहुत अधिक महत्व दिया जाता है, अवश्य ही ऐसे फायदों के साथ जीवन प्रारंभ करेंगे जो कि कोई भी विधान प्रदान नहीं कर सकता है। माता-पिता का चरित्र अनिवार्य रूप से उन बच्चों के गुणों को बहुत अधिक प्रभावित करेगा जो उनके संपर्क में आते हैं। इसलिए जब तक कुटुम्ब प्रयास करता है, और इस बात के न होने की प्रत्याशा का वांछा करने के लिए कोई कारण प्रतीत नहीं होता है वे भिन्न-भिन्न वातावरण जो कि वह सृजित करेगा, समान अवसरों की धारणा को बिल्कुल विलक्षण बना देंगे। (देखिए-ली देनवाटर) द्वारा संपादित सोशल प्रावलम्स एण्ड पब्लिक पालिसी- इनइक्वैलिटी एण्ड जस्टि" लिबर्टी एण्ड इक्वैलिटी पृष्ठ 26 से 31")

(इस अंश को न्यायाधिपति मैथ्यू ने, "केरल राज्य बनाम एन. एम. टामस" (सु. प्रा.) के निर्णय में उदधृत किया है, ए.आई. आर. 1976 सु. को. 490= (1976) 2 उम. नि.प. पृष्ठ 936 के पृष्ठ 1014)

अवसर समता की धारणा यह है कि कोई सीमित माल वस्तुतः उन आधारों पर आवंटित किया जाएगा जो कि निगम्य रूप से उनके किसी ऐसे वर्ग को अपवर्जित न करे जो उसकी वांछा करता हो। लोगों के सभी वर्ग देश की लोकसेवा में प्रतिनिधित्व की वांछा और उसका दावा करते हैं।

अनुच्छेद 335 यह धारणा करता है कि अनु. जातियों और अनु. जनजातियों के सदस्यों का संघ और साथ ही राज्यों की लोकसेवा में प्रतिनिधित्व का दावा होता है और उस दावे पर संघ और राज्यों की सेवाओं, पर नियुक्तियों करने में प्रशासन की दक्षता की संगति के अनुसार विचार किया जाना है। अवसर की समता की धारणा कि अर्थ केवल तभी होता है जबकि कोई सीमित माल, या इस संदर्भ में, पदों की सीमित संख्या ऐसे आधारों पर आवंटित की जानी चाहिए जो निगम्य रूप से नागरिकों के उन वर्गों को जो उसकी वांछा करते हैं, अपवर्जित न करें।

अब प्रश्न यह है कि निगम्य अपवर्जन क्या है? इससे प्रश्नगत माल (पदों) के लिए समूचित या तर्क पूर्ण आधारों से भिन्न आधारों पर अपवर्जन अभिप्रेत है। यह धारणा केवल इतनी ही अपेक्षा नहीं करती है कि प्रश्नगत माल तक समुचित या तर्कसंगत आधारों से भिन्न आधारों पर पहुंच से अपवर्जन नहीं होना चाहिए, अपितु माल के लिए समुचित समझे गए आधार स्वयं भी ऐसे होने चाहिए कि समुदाय के सभी वर्गों के लोगों को अपनी तुष्टि करने का समान अवसर प्राप्त हो।

"इससे यह निष्कर्ष निकलेगा कि यदि हम अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजातियों व पिछड़े वर्गों के सदस्यों को नियोजन के लिए अवसर-समता प्रदान करना चाहते हैं तो हमें उनके सामाजिक, शैक्षिक और आर्थिक वातावरण पर भी विचार करना होगा। अनुच्छेद 46 में समाविष्ट निर्देशक सिद्धांत ने केवल विधि निर्माता पर आबद्ध हो कर होता है, जैसा कि मामूली तौर पर समझा जाता है, अपितु जब न्यायालय कोई विनिश्चय करें तब उसका दृष्टिकोण भी उस सिद्धांत द्वारा समान रूप से प्रेरित होना चाहिए। क्योंकि न्यायालय भी अनुच्छेद 12 के अर्थान्तरागत 'राज्य' है और विधि बनाता है। यद्यपि वह चाहे बड़े या छोटे रिक्त स्थान की पूर्ति करने वाला ही हो (देखिए ए.आई. आर. 1976 सु. को. 490= (1976) 2 उमा. नि. प. 936 पृष्ठ 1017)

समतावादी सिद्धांत ने बढ़ते हुए इस विश्वास को बल दिया कि असमताओं को दूर करना और मानवीय अधिकारों और दावों के प्रयोग के लिए अवसर प्रदान करना सरकार का एक निश्चयात्मक कर्तव्य है। संविधान के भाग -3 में यथा अधिनियमित मूल अधिकार यदि पूर्ण रूप से विचार किया जाए तो अनिवार्यतः नकारात्मक स्वरूप के हैं। वे उस क्षेत्र की सीमा बंद कर देते हैं जिसमें सरकार को कोई अधिकार तो नहीं होना चाहिए।

संविधान के भाग -4 का मानवीय अधिकारों तक भी विस्तार है और वह समता और स्वतंत्रता की उन्नति की सकारात्मक बाध्यता अधिरोपित करता है। अपने समुदाय के कमजोर वर्गों की सहायता करने की बाध्यता सहित राज्य के विचार का बल प्रभाव सांवैधानिक विधि में बढ़ता हुआ

प्रतीत होता है।

वर्तमान युग में यह भावना कि सामाजिक, आर्थिक या अन्य असमताओं को दूर करने के लिए सरकार का एक निश्चित उत्तरदायित्व है, संवैधानिक विधि की एक प्रबल धारणा है। जब कि न्यून विशेषाधिकार युक्त व्यक्तियों के लिए विशेष रियायतों को सरलता से अनुज्ञात किया गया है। पारम्परिक रूप से उनकी उपेक्षा नहीं की गई है।

रूसो ने कहा है कि "ठीक इसलिए कि परिस्थितियों के बल की प्रवृत्ति समता को नष्ट करने की होती है, विधान के बल की प्रवृत्ति सदैव उसे बनाए रखने की होनी चाहिए"। (देखिए कान्ट्रेक्टर शोशल 11)

आरक्षण करने की शक्ति, का जो कि अनुच्छेद 16 (4) के अधीन राज्य को प्रदत्त की गई है, प्रयोग किसी उचित मामले में न केवल नियुक्ति के लिए आरक्षण का उपबन्ध करके ही किया जा सकता है अपितु चयन पदों के। अनुच्छेद 16 (4) के अधीन नियुक्तियां या पदों के आरक्षण का उपबन्ध करने के लिए राज्य को प्रशासन में दक्षता बनाए रखने के अनुरूप पिछड़े वर्गों के दावों पर विचार करना होता है। यह भूलना नहीं चाहिए कि प्रशासन की दक्षता को समाप्त करते हुए कोई आरक्षण करना अविवेकपूर्ण और अनुज्ञेय होगा। (देखिए महाप्रबंधक, दक्षिण रेलवे बनाम रंगाचारी, ए. आई.आर. 1962 सु. को. 32)

अनुच्छेद 16 (1) और अनुच्छेद 16 (2) नियुक्तियों प्रोन्नति के लिए युक्तियुक्त अर्हता विहित किए जाने का प्रतिषेध नहीं करते हैं। किसी पद पर नियोजन या नियुक्ति के लिए उचित रूप से नियत की गई किसी अर्हता के संबंध में कोई उपबन्ध जो सब लोगों को लागू होता हो, अनुच्छेद 16 (1) के अधीन अवसर समता के सिद्धांत के अनुरूप होगा। देखिए महाप्रबंधक, दक्षिण रेल्व, बनाम रंगाचारी "यह कहा गया है कि अनुच्छेद 16 (4) में पिछड़े वर्गों में पक्ष में पदों के आरक्षण के लिए विनिर्दिष्ट रूप से उपबन्ध किया गया है, जिसके अंतर्गत इस न्यायालय के विनिश्चय के अनुसार प्रोन्नति के प्रक्रम पर भी आरक्षण करने की राज्यों की शक्ति होगी और इसलिए अनुच्छेद 16 (1) की ब्याधि अंतर्गत विधान द्वारा या अन्यथा पिछड़े वर्गों की कोई ऐसी आकस्मिक सहायता देना नहीं आएगा जो कि यथार्थ संख्यात्मक समता का अल्पीकरण करेगी। यदि आरंभिक प्रक्रम पर या प्रोन्नति के प्रक्रम पर या दोनों पर अनुसूचित जातियों और अनु. जनजातियों, पिछड़े वर्गों के सदस्यों के लिए नियोजन के मामले में अवसर समता सुनिश्चित करने के लिए आरक्षण करना आवश्यक है तो इसके लिए कोई कारण दिखाई नहीं देता कि यह बात अनुच्छेद 16 (1) के अधीन अनुज्ञेय क्यों नहीं है

क्योंकि केवल यही उपबन्ध उस परिणाम को प्राप्त करने में जो कि अवसर समता उत्पन्न करेगी, उन्हें उन्नत समुदायों के बराबर बना सकता है। (देखिए "केरल राज्य बनाम एन. एम. टामस" ए.आई. आर. 1976 सु. को. पृष्ठ 490 = (1976) 2 उमा. नि.प. 936 पृष्ठ 1023)

इस बात का अनुमान कि क्या अवसर समता है, परिणाम में प्राप्त होने वाली समता से ही लगाया जा सकता है। औपचारिक अवसर समता केवल अधिक शिक्षा और ज्ञान वाले व्यक्तियों को ही सभी पद हासिल कर लेने और शिक्षा तथा बुद्धि से कम भाग्यवान व्यक्तियों पर विजय प्राप्त करने में समर्थ बनाएगी, भले ही प्रतियोगिता निषपक्ष हो। परिणाम की समता अवसर समता की कसौटी है।

यदि अनुच्छेद 16 (1) के अधीन गारंटी अवसर समता से प्रभावशील सारवान समता अभिप्रेत है तो अनुच्छेद 16 (4) अनुछेद 16 (1) का अपवाद नहीं हैं। यह केवल उस सीमा को दर्शित करने का प्रबल ढंग है जिस तक अवसर समता को ले जाया जा सकता है अर्थात आरक्षण करने की सीमा तक भी।

राज्य कोई भी ऐसा अध्युपाय अपना सकता है जो कि लोक सेवा में अनुसूचित जातियों, अनु. जनजातियों, एवं पिछड़े वर्गों के सदस्यों का पर्याप्त प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करे और अवसर समता सुनिश्चित करने के लिए प्रतिकारात्मक अध्युपाय में प्रशासन की दक्षता के लिए अनिवार्य न्यूनतम आधारभूत अर्हता के अर्जन से अभिमुक्ति न दे दी गई हो :-

संविधान के अनुच्छेद 16 (1) के अधीन सरकार द्वारा किए जा सकने वाले वर्गीकरण के स्वरूप की परीक्षा करने के पहले ऐसी तीन स्थितियों का उल्लेख करना आवश्यक है जिनको अनेक नजीरों से समर्थन प्राप्त होता है।

(1) यह कि अनुच्छेद 16 अनुच्छेद 14 का मात्र आनुषंगिक है और ये दोनों ही अनुच्छेद एक ही ऐसी प्रणाली के भाग है, जो कि एक ही उद्देश्य की पूर्ति करना चाहते हैं। उच्चतम न्यायालय के अनेक विनिश्चयों से इस मत का समर्थन होता है।

"जम्मू कश्मीर राज्य बनाम त्रिलोकी नाथ खोसा और अन्य" मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया थासंविधान का अनुच्छेद 16, जो नियोजन संबंधी मामलों में सभी नागरिकों को समान अवसर सुनिश्चित करता है, अनुच्छेद 14 में अन्तर्विष्ट समता की प्रत्याभूति का एक उदाहरण या अनुषंग है। निस्संदेह समान का सिद्धांत प्रोन्नति के जरिए नियुक्ति और सेवा समाप्ति से लेकर

उपदान और पेंशन के संदाय तक व्यक्ति के नियोजन के संपूर्ण क्षेत्र तक फैला हुआ है। .....(ए. आई. आर. 1974 सु. को. पृष्ठ 11)

"मोहम्मद सुजात अली और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य" वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने (ए. आई. आर. 1974 सु. को 1631 से 1652) यह मत व्यक्त किया था :-

"अनुच्छेद 14 प्रत्येक व्यक्ति को विधि के समक्ष समता तथा विधियों के समान संरक्षण को सुनिश्चित करता है और अनुच्छेद 16 में यह अभिकथित है कि सभी नगारिकों के लिए नियोजन संबंधी विषयों में अथवा राज्य के अधीन किसी पद के लिए नियुक्ति के विषय में समान अवसर होंगे। अनुच्छेद 16 अनुच्छेद 14 में निहित समता की गांरटी का उदाहरण अथवा अनुषंग मात्र है। यह सार्वजनिक नियोजन के क्षेत्र में समता के सिद्धांत को कार्यरूप देता है। अनुच्छेद 16 में पाई जाने वाली अवसर की समानता की संकल्पना किसी व्यक्ति के नियोजन के समस्त क्षेत्र में विद्यमान होती है जिसमें प्रोन्नति द्वारा नियुक्ति तथा सेवा के पर्यवसान से लेकर उपदान तथा पेंशन का संदाय आता है और इसमें अवसर की समानता के आदर्श की अभिव्यक्ति की गई है जो संविधान की उदेशिकों में उप वर्णित एक महान सामाजिक एवं आर्थिक उद्देश्य है।

"गोविन्द दत्तात्रेय केलकर और अन्य बनाम मुख्य नियंत्रक आयात और निर्यात और अन्य वाले मामले (ए.आई. आर. 1967 सु. को. 939 के पृष्ठ 841/- 842) में उच्चतम न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया था :-

"संविधान का अनुच्छेद 16, अनुच्छेद 14 में अन्तर्विष्ट समता की संकल्पना को लागू किए जाने का अनुषंग मात्र है। यह नियुक्ति और प्रोन्नति के मामले में समता के सिद्धांत को प्रभावी करता है। उससे यह अर्थ निकलता है कि नियुक्ति या प्रोन्नति के प्रयोजन के लिए कर्मचारियों का युक्तियुक्त वर्गीकरण हो सकता है।"

उच्चतम न्यायालय ने "एस. जी. जयसिंघानी बनाम भारत संघ और अन्य" (ए.आई. आर. 1967 सु. को 1427 के पृष्ठ 1431) के मामले में ऐसा ही मत व्यक्त किया है।

महाप्रबंधक, दक्षिण रेलवे बनाम रंगाचारी (ए.आई. आर. 1962 सु. को. 36 के पृष्ठ 41) में उच्चतम न्यायालय ने निम्न मत व्यक्त किया है :-

"इस संबंध में यह स्मरण रखना सुसंगत हो सकता है कि अनुच्छेद 16 (1) और (2) वास्तव में अनुच्छेद 14 द्वारा प्रत्याभूत विधि के समक्ष समता को तथा अनुच्छेद 15 (1) द्वारा प्रत्याभूत विभेद के प्रतिषेध को प्रभावी करते हैं। तीनों उपबन्ध एक ही संवैधानिक प्रतिभूति संहिता के भाग है और एक दूसरे के अनुपूरक हैं। यदि ऐसी बात है, तो यह अभिनिर्धारित करने में कोई भी कठिनाई नहीं होगी कि नियोजन संबंधित मामलों में ऐसे नियोजन के पूर्व के और पश्चात के नियोजन से संबंधी सभी ऐसे मामले आने चाहिए जो कि नियोजन के आनुषंगिक होते हैं और ऐसे नियोजन के निबंधन और शर्तो के भाग होते हैं।"

2. यह भी सुस्थित है कि अनुच्छेद 16 प्रोन्नतियों और चयन के पदों सहित, नियुक्तियों के सभी वर्गों को लागू होता है। उच्चतम न्यायालय ने "सी.ए. राजेन्द्रन बनाम भारत संघ और अन्य (ए.आई. आर. 1968 सु. को. 507 के पृष्ठ 511) के मामले में यह मत व्यक्त किया था, इस मामले में जिस प्रथम प्रश्न पर विचार किया जाना है कि क्या संघ सरकार पर ऐसा कोई संवैधानिक कर्तव्य या बाध्यता अधिरोपित करता है कि वह अनु. जाति और अनु. जन जातियों के लिए या तो रेल बोर्ड सचिवालय सेवा स्कीम में भर्ती के प्रारंभिक प्रक्रम में या प्रोन्नति के प्रथम में आरक्षण करें।

इस विषय में सम्बन्धित सुसंगत विधि सुस्थिर है। संविधान के अनुच्छेद 16 के अधीन राज्याधीन नौकरियों या पदों पर नियुक्ति के या तदधीन एक पद से दूसरे उच्च पद के संबंध में सब नागरिकों के लिए अवसर की समानता होगी। अनुच्छेद 14, 15 और 16 एक ही संवैधानिक प्रतिभूति संहिता के भाग हैं और एक दूसरे के अनुपूरक है। अन्य शब्दों में संविधान का अनुच्छेद 16 उसके अनुच्छेद 14 में अन्तर्विष्ट समता की संकल्पना के लागू होने का अनुषंग मात्र है। यह नियुक्ति और पदोन्नति के मामले में समता के सिद्धांत का प्रभावीकरण है। अतः उससे यह अर्थ निकलता है कि नियुक्ति और प्रोन्नति के प्रयोजन के लिए कर्मचारियों का युक्तियुक्त वर्गीकरण हो सकता है।

3- यह कि अनुच्छेद 16 विधि मान्य वर्गीकरण की अनुज्ञा देता है :-

"जम्मू कश्मीर राज्य बनाम त्रिलोकी नाथ खोसा और अन्य" (ए. आई. आर. 1974 सु. को. 1) (सु.प्रा.) वाले उपर्युक्त मामले में इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया था कि :-

चूंकि समता और समान अवसर की संवैधानिक संहिता समान व्यक्तियों के मामलों के लिए एक चार्टर (मांग पत्र) है, इसलिए प्रोन्नति के मामलों में अवसर की समता में उन सभी व्यक्तियों के लिए जो सारतः एक हीं वर्ग में आते हैं, प्रोन्नति संबंधी समान अवसर अभिप्रेत है। इसलिए

कर्मचारियों का वर्गीकरण एक वर्ग के कर्मचारियों को दूसरे वर्ग के कर्मचारियों से प्रथमतः अनन्यता दर्शित करने के लिए और तत्पश्चात उनमें प्रभेद करने के लिए लिया जा सकता है।

उच्चतम न्यायालय द्वारा "सी.ए. राजेंद्रन बनाम भारत संघ" (ए.आई. आर. 1968 सु. को. 507) एस. जी. जयसिंघानी वाले मामले (ए.आई. आर. 1967 सु. को. 1427) (रंगाचारी के मामले) ए. आई. आर. 1962 सु. को. 391 मोहम्मद सुजात अली वाले मामले (ए. आई. आर. 1974 सु. को. 1631) अ. भा. शोषित कर्मचारी संघ रेलवे बनाम भारत संघ (ए. आई. आर. 1981 सु. को. 298) के मामले में यही मत व्यक्त किया गया है।

केरल राज्य बनाम एन. एम. टामस वाले मामले में न्यायाधिपति फजल अली ने निम्न विचार व्यक्त किये हैं :-

"वर्गीकरण का यह रूप जिसे आरक्षण के रूप में निर्दिष्ट किया गया है, मेरी राय में स्पष्ट रूप से संविधान के अनुच्छेद 16(4) के अंतर्गत आ जाता है, जो कि इस मुद्दे के संबंध में पूरी तरह से सर्वांगीण हैं, अर्थात यह कि अनुच्छेद 16 का खण्ड (4) अनुच्छेद 14 का अपवाद इस अर्थ में नहीं है कि जो कुछ भी वर्गीकरण किया जा सकता है, वह अनुच्छेद 16 के खण्ड (4) के जरिए से ही किया जा सकता है। किन्तु अनुच्छेद 16 का खण्ड (4) ऐसा स्पष्टीकरण है जिससे ऐसे आरक्षण से संबंधित सर्वांगीण और अनन्य उपबंध अर्न्तविष्ट है, जो कि वर्गीकरण के रूपों में से एक रूप है। इस प्रकार से अनुच्छेद 16 (4) के खण्ड -4 में अनन्य रूप से आरक्षण के संबंध में उपबन्ध किया गया है, न कि वर्गीकरण के अन्य रूपों के संबंध में जो कि स्वयं अनुच्छेद 16 (1) के अधीन किया जा सकता है। चूंकि खण्ड (4) आरक्षण से संबंधित विशेष उपबंध है, इसलिए बिना किसी खतरे के यह अभिनिर्धारित किया जा सकता है कि वह उस सीमा तक अनुच्छेद 16 (1) के अधीन कोई भी आरक्षण नहीं किया जा सकता। यह सच है कि इस न्यायालय की कुछ ऐसी नजीरें हैं कि खण्ड (4) अनुच्छेद 16 (1) का अपवाद है किन्तु सादर में इस मत से उन कारणों से सहमत होने की स्थिति में नहीं हूं जिनके बारे में मैं इसके बाद बताऊंगा।"

"पहली बात यह है कि यदि हम अनुच्छेद 16 (4) को अनुच्छेद 16 (1) के अपवाद के रूप में पढ़ें तो यह निश्चित निष्कर्ष होगा कि अनुच्छेद 16 (1) किसी भी वर्गीकरण की अनुज्ञा नहीं देता है, क्योंकि खण्ड (4) में इसके लिए अभिव्यक्त उपबंध किया गया है किन्तु यह अनुच्छेद 14 में अन्तर्विष्ट समता की आधारित संकल्पना के प्रतिकूल है जो कि वर्गीकरण का किसी भी रूप में निर्विवाद रूप में अनुज्ञा करता है परन्तु यह तब जब कि किन्हीं शर्तों की पूर्ति कर दी जाये। इसके

अलावा यदि खण्ड (4) में अन्तर्विष्ट आरक्षण किये जाने के सिवाय, अनुच्छेद, 16 (1) के अधीन कोई भी वर्गीकरण नहीं किया जाता है तो अनुच्छेद 335 में अन्तर्विष्ट आज्ञा का पालन होगा। (देखिए ए.आई.आर. 1967 सु. को. 490 के पृष्ठ ए. 553 पर)

टी. देवदासन बनाम भारत संघ और एक अन्य वाले मामले में न्यायाधिपति सुब्बाराव के, जैसे कि वे इस समय थे, भी यही विचार थे :- "यही कारण है कि संविधान निर्माताओं ने अनुच्छेद 16 में खण्ड (4) को पुनर्स्थापित किया था।" इस अनुच्छेद की किसी बात अभिव्यक्ति सर्वाधिक जोरदार ढंग से अपना यह आशय अभिव्यक्त करने की विधायी युक्ति है कि तदधीन प्रदत्त शक्ति किसी भी प्रकार से मुख्य उपबंध द्वारा सीमित नहीं है किन्तु उसके बाहर है। उनके परिणाम स्वरूप वास्तव में बलात कोई अपवाद प्राप्त नहीं हुआ है, बल्कि उसके परिणाम स्वरूप ऐसी शक्ति को संरक्षण प्राप्त हुआ है जिनमें अनुच्छेद के अन्य उपबंधों द्वारा कोई भी बाधा उत्पन्न नहीं की गई है।
(ए. आई. आर. 1964 सु. को. 179)

अनुच्छेद 16 (4), अनुच्छेद 16 (1) का परन्तुक नहीं है, किन्तु इस खण्ड के अन्तर्गत अनुच्छेद 16 का संपूर्ण क्षेत्र आता है, इसका महाप्रबंधक दक्षिण रेलवे बनाम रंगाचारी वाले मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा दिये गये विनिश्चय से पर्याप्त समर्थन प्राप्त होता है, जिसमें यह मत व्यक्त किया गया था कि (यह समान आधार है कि अनुच्छेद 16 (4) के अन्तर्गत अनुच्छेद 16 (1) और (2) के अंतर्गत आने वाला संपूर्ण क्षेत्र नहीं आता। नियोजन से संबंधित कुछ मामले जिनके संबंध में अनुच्छेद 16 (1) और 16 (2) द्वारा अवसर समता प्रत्याभूत की गई है, अनुच्छेद 16 (4) के अभिभाष्य खण्ड (नान आबसेन्टी क्लोज) की परिधि के भीतर नहीं आते हैं। ("देखिए ए. आई. आर. 1962 सु. को. 32 के पृष्ठ 42 पर")

अनुच्छेद 16 के खण्ड (4) का विश्लेषण करते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि उसमें ऐसे अभिव्यक्त उपबंध मौजूद हैं जो कि उपयुक्त मामलों में आरक्षण करने के लिए राज्य को **सशक्त** करते हैं, परन्तु यह तब जब कि निम्नलिखित शर्तें पूरी हो जाती हैं :-

1. यह कि जिस वर्ग के लिए आरक्षण किया जाता है, उसको सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़ा हुआ होना चाहिए।

2. यह कि जिस वर्ग के लिए आरक्षण किया गया है उसका प्रतिनिधित्व राज्याधीन सेवाओं में पर्याप्त रूप से नहीं किया गया है।

3. आरक्षण इतना अधिक नहीं होना चाहिए जिससे कि समानता की संकल्पना ही नष्ट हो जाए।

4. दक्षता में हानि पहुंचाकर आरक्षण नहीं किया जाना चाहिए। हमारे आयोग ने प्रथम शर्त के बारे में विस्तृत जांच की है, विभिन्न माध्यमों से आंकड़े एकत्र किया है और साक्ष्य एकत्र किया है। किसी वर्ग के सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़ापन के निर्धारण का मानदंड क्या हो या और उसका क्या कसौटी होगी, इसके संबंध की जानकारी या विस्तृत विवेचना पिछले अध्यायों में की गई है। सामाजिक एवं शैक्षणिक पिछड़ापन के मानदंड क्या हो इसके संबंध में उच्चतम न्यायालय का क्या अभिमत है, इसकी विस्तार से पिछले अध्यायों में चर्चा की गई है।

आयोग ने दूसरी शर्त के संबंध में कि पिछड़े वर्गों का प्रतिनिधित्व राज्याधीन सेवाओं में पर्याप्त रूप से है या नहीं के आंकड़े संपूर्ण मध्य प्रदेश के विभागों से एकत्र करवाया है। जिसका विवरण अनुसूची एवं तालिकाओं में दिया गया है। आयोग ने जिन वर्गों एवं जातियों को पिछड़े वर्गों में प्रस्तावित करने की सिफारिश की है, उनका प्रतिनिधित्व राज्य सेवाओं में नगण्य है, बहुत से वर्गों एवं जातियों का प्रतिनिधित्व शून्य है। राज्याधीन सेवाओं के वर्ग -1 एवं वर्ग -2 की सेवाओं में तो अधिकांश जातियों एवं वर्गों का प्रतिनिधित्व न के बराबर है। हमारे आयोग ने वर्ग (4) की सेवाओं में जो प्रतिनिधित्व पिछड़े वर्गों का कुछ दिखता है, उसको प्रतिशत की गणना करते समय अलग करने का निर्णय लिया है, क्योंकि वर्ग -4 की सेवाओं के लिए पहले या आज भी कोई योग्यता निर्धारित नहीं है। वर्ग-4 में पिछड़े वर्गों का जो थोड़ा सा प्रतिनिधित्व दिखता है वह उसका कारण है, उच्चवर्ण या उन्नत जातिया, निम्न श्रेणी के कार्य जो कि वर्ग -4 के कर्मचारियों को करना पड़ता है नहीं करते थे और न आज भी करते हैं इसलिए वर्ग -4 की सेवा में पिछड़े वर्गों का थोड़ा प्रतिनिधित्व दिखता है।

आरक्षण की मात्रा क्या हो?

भारतीय संविधान में आरक्षण की क्या सीमा व प्रतिशत हो, इस पर कोई प्रतिबंध नहीं लगाया गया है। अनुच्छेद 16 के खण्ड-4 के अधीन आरक्षण करने संबंधी सरकारी शक्ति पर कोई सीमा नहीं लगाई गई है। इसके लिए उच्चतम न्यायालय के "केरल राज्य बनाम एन.एम. टामस" के प्रकरण में दिए गए न्यायाधिपति मुर्तजा फजल अली द्वारा व्यक्त मत महत्वपूर्ण है जो कि निम्न है:–

अनुच्छेद 16 के खण्ड-4 के अधीन आरक्षण करने संबंधी सरकार की शक्ति पर कोई सीमा नहीं लगाई गई है-..... यह बात कि अनुज्ञेय सीमाओं के भीतर उपयुक्त आरक्षण कौन सा होगा, प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर होगी और इसके संबंध में कोई ऐसा गणितीय फार्मूला नहीं बनाया जा सकता है जिससे किसी मामलों में उसका पालन किया जा सके। निस्संदेह इस

न्यायालय द्वारा विनिश्चय मामलों में यह अधिकथित किया गया है कि आरक्षण की प्रतिशतता 50 प्रतिशत से अधिक नहीं होनी चाहिए। जैसा कि मैंने उन नजीरों का अर्थान्वयन किया है, यह नियम सावधानी बरतने के लिए है और वह सभी प्रवर्गों को लागू नहीं होता है। उदाहरणार्थ यदि मान लिया जाये कि किसी राज्य में नगारिकों के अनेक पिछड़े हुए वर्ग हैं जो जनसंख्या के 80 प्रतिशत हैं, और सरकार उन्हें प्रतिनिधित्व देने की दृष्टि से उनके लिए 80 प्रतिशत आरक्षण करती है तो क्या यह कहा जा सकता है कि आरक्षण की प्रतिशतता अनुचित है और वह अनुच्छेद 16 के खण्ड (4) की अनुज्ञेय सीमाओं का अतिक्रमण करती है? इसका उत्तर आवश्यक रूप से नकारात्मक ही होना चाहिए। इस संबंध का मुख्य उद्देश्य अपर्याप्त प्रतिनिधित्व को पर्याप्त बनाने के लिए कदम है। (देखिए ए.आई. आर. 1976 सु. को. 490 के पृष्ठ 554 एवं 555 पर)"

टामस के मामले में ही न्यायाधिपति कृष्ण अय्यर ने भी यही मत व्यक्त किया है जो निम्न है। मैं अपने विद्वान भ्राता न्यायाधिपति फजल अली से इस संबंध में सहमत हूं कि पूर्ववर्ती कुछ विनिर्णयों में किसी विशिष्ट वर्ष में पचास प्रतिशत की गणित संबंधी सीमा की बावत बहुत अधिक जोर नहीं दिया जा सकता। किसी विभाग में समग्र प्रतिनिधित्व किसी विशिष्ट वर्ष में भर्ती पर निर्भर नहीं करता है किन्तु कार्डर की कुल संख्या पर निर्भर करता है। अनुच्छेद 16 (4) का उन्होंने निर्वचन किया है मैं उनके अग्रनयन के नियम से सहमत हूं। (देखिए ए. आई. आर. 1967 सु. को. 490 पृष्ठ 537)

उच्चतम न्यायालय "केरल राज्य बनाम एन. एम. टामस" के मामले में 68.6 प्रतिशत आरक्षण को वैध करार दिया है। इस प्रकार से "एम. आर. बालाजी" बनाम मैसूर राज्य "ए.आई. आर. 1963 सु. को. 649 में अभिनिर्धारित सिद्धांत को कि आरक्षण 50 प्रतिशत से अधिक नहीं होना चाहिए। उच्चतम न्यायालय ने "केरल राज्य बनाम एन. एम. टामस" के मामले में उलट दिया है।

उच्चतम न्यायालय ने अखिल भारतीय शोषित कर्मचारी संघ (रेलवे बनाम भारत संघ एवं अन्य) के मामले में "केरल राज्य बनाम एन. एम. टामस" के मामले में निर्धारित अभिमत से सहमति व्यक्त किया है, न्यायाधिपति कृष्ण अय्यर ने बहुमत का निर्णय देते हुए निम्न विचार व्यक्त किया है" :-

"प्रत्यार्थियों ने इस बात पर बल दिया है कि "केरल राज्य बनाम एन. एम. टामस" वाले मामले में सात न्यायाधीशों द्वारा दिए गए निर्णय को ध्यान में रखते हुए देवदासन वाले विनिश्चय में प्रतिवादित विधि का कोई महत्व नहीं रह गया है। पश्चात कथित मामले में दिए गए कुछ व्यक्तिगत

निर्णयों से यह प्रतीत होता है कि भले ही बहुमत वाले न्यायपीठ ने देवदासन वाले मामले को स्पष्ट अभिखंडित नहीं किया है तथापि अधिकांश न्यायाधीशों ने जो अवलोकन किया है, उससे इस विनिश्चय में प्रतिपादित सिद्धांत की विधि मान्यता पर संदेह व्यक्त किया है और अन्ततः इस मामले में अनु. जाति और अनु. जन. जातियों के कुल 51 प्रोन्नत अभ्यार्थियों में से 34 अभ्यार्थियों के प्रोन्नति को जारी रखा गया। इससे स्पष्ट है कि देवदासन और "एन. एम. टामस वाले मामले में दिए गए निष्कर्षों में परस्पर मतभेद है। एन. एम. टामस वाले मामले में केरल स्टेट एण्ड सबार्डिनेट सर्विस रूल्स के नियम 13 (ए ए) की विधि मान्यता को प्रश्नगत किया गया था। उस नियम में विशिष्ट अवधि के भीतर प्रोन्नति परीक्षा उत्तीर्ण करने के लिए अनु. जाति और अनु. जन जाति के सदस्यों को भी अनुज्ञा दी गई थी।"

"परिणाम स्वरूप नियम 13 (ए) के प्रभाव से 50 प्रतिशत से अधिक प्रोन्नत पद अनु. जाति और अनु. जन जाति के अभ्यार्थियों को मिल गए। पिटीशनरों द्वारा अग्रनयन के नियम को जो चुनौती दी गई है, उसके बारे में हमें यह संदेह है कि जो कुछ एन. एम. टामस वाले मामले में कहा गया है, उसकी अवहेलना की जा सकती है और इसलिए इस मामले में यह संभव नहीं है कि उनके पक्ष में कोई निष्कर्ष दिया जा सके। चूंकि स्थिति स्पष्ट नहीं है और जैसा कि हमारे विद्वान बंधुओं ने अग्रनयन के नियम के संबंध में रुख अपनाया है, मैं अपने आपको इन्हीं अवलोकनों तक सीमित रखता हूं। (देखिए ए. आई. आर. 1981 सु. को. 298 के पृष्ठ 333 पर) अखिल भा. शोषित कर्मचारी संघ रेलवे बनाम भारत संघ के मामले में न्यायाधिपति चिनप्पा रेड्डी ने आरक्षण की सीमा के संबंध में निम्न विचार व्यक्त किए हैं। ..... लोक सेवाओं में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जन जातियों का सम्यक प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने के लिए प्रत्येक वैध पद्धति अनुज्ञेय है। अनु. जातियों और अनु. जन जातियों के पक्ष में आरक्षण या अधिमानी व्यवहार के लिए कोई अधिकतम सीमा तय नहीं है तथापि समान्यतया आरक्षण 50 प्रतिशत से अधिक नहीं होना चाहिए। 50 प्रतिशत के नियम के बारे में कोई कठोरता नहीं है। न्यायाधीशों द्वारा ऐसा नियम केवल सुविधाजनक मार्गदर्शन के लिए अधिकथित किया गया है। प्रत्येक मामले का विनिश्चिय अधिमानी व्यवहार के किसी विशेष नियम को लागू करके प्राप्त वर्तमान व्यावहारिक परिणामों के प्रतिनिर्देश से विनिश्चय किया जाना चाहिए जो भविष्य में नियम को लागू करके प्राप्त हो सकते हैं।....." (देखिए ए.आई. आर. 1981 सु. को. 298 के पृ. 339-340) इस शोषित कर्मचारी संघ वाले मामले में 65 प्रतिशत आरक्षण को उच्चतम न्यायालय ने वैध करार दिया है।

वर्तमान समय में "तमिलनाडू राज्य में" संविधान के अनुच्छेद 16 (4) के अन्तर्गत निम्न लिखित आरक्षण व्यवस्था चालू है।

1.	सामाजिक व शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग	50 प्रतिशत
2.	अनुसूचित जाति	15 प्रतिशत
3.	अनुसूचित जन जाति	3 प्रतिशत
		68 प्रतिशत

तमिलनाडू राज्य सरकार द्वारा जारी 68 प्रतिशत आरक्षण व्यवस्था को उच्चतम न्यायालय में चुनौती दी गई थी। उच्चतम न्यायालय ने 68 प्रतिशत आरक्षण को रद्द नहीं किया। तमिलनाडू राज्य ने आवेदन पत्र को स्वीकार करते हुए नया पिछड़ा वर्ग आयोग नियुक्त करने का आदेश दिया है, जो कि वर्तमान समय में पिछड़े वर्गों के वर्गीकरण व रेखांकन का पुनरावलोकन करेगा (देखिए रिट पिटीशन्स नं. 4995- 97य 80 एवं 402/ 81 आदेश दिनांक 14.10.82, नामाशिव मुदालियार मेमोरियल मिडिल स्कूल एवं अन्य बनाम तमिलनाडू राज्य एवं अन्य)

कर्नाटक राज्य में अनुच्छेद 16 (4) के तहत निम्न आरक्षण व्यवस्था वर्तमान समय में राज्य सरकार द्वारा चालू है।

1.	पिछड़े वर्गों के लिए-	48 प्रतिशत
2.	अनुसूचित जाति के लिए	15 प्रतिशत
3.	अनुसूचित जनजातियों के लिए	3 प्रतिशत

संविधान में आरक्षण की कोई सीमा निर्धारित नहीं है। 50 प्रतिशत से अधिक आरक्षण नहीं होना चाहिए ऐसा नियम "एम. आर. बालाजी एवं अन्य बनाम मैसूर राज्य" (देखिए ए. आई. आर. 1963 सु. को. 649) में जो विनिश्चित किया गया है, वह न्यायालयों के सुविधाजनक मार्गदर्शन के लिए अभिकथित किया गया है। 50 प्रतिशत से आरक्षण अधिक न होगा यह मार्गदर्शन हेतु, अभिकथन उन्हीं आरक्षणों में लागू होगा जो कि अनुच्छेद 15(4) एवं अनुच्छेद 16 (4) के अंतर्गत किए जाएंगे। राज्य द्वारा अन्य श्रेणियों के लिए किया गया आरक्षण इस 50 प्रतिशत की गणना करते समय नहीं जोड़ा जाएगा क्योंकि वह आरक्षण प्रशासनिक आदेशों द्वारा किया जाता है न कि अनुच्छेद 16 (4) के अंतर्गत। उदाहरण के लिए मध्यप्रदेश में शासकीय नौकरियों में कुछ स्थान विकलांगों के लिए तथा कुछ स्थान अन्य श्रेणी के लोगों के लिए आरक्षित हैं। लेकिन इनको 50 प्रतिशत की गणना में शामिल नहीं किया जाएगा। केवल अनु. जातियों एवं अनु. जन जातियों के लिए लोक सेवा में किया गया आरक्षण अनुच्छेद 16 (4) के अन्तर्गत आता है। इस सिद्धांत की पुष्टि मैसूर हाई कोर्ट

के मामले में दिए गए निर्णय (सुभाषिणी बनाम मैसूर राज्य ए. आई. आर. 1966 मैसूर 40, से होता है इस मामले में सारांश निम्न है:-

मैसूर सरकार के जुलाई 1963 के आदेश को जिसके अधीन मेडिकल कालेजों में प्रवेश के लिए आरक्षण किए गए, चुनौती दी गई थी। आदेश पर आरोप करने का एक आधार यह था कि इसके अधीन उपलब्ध स्थानों में से 50 प्रतिशत से अधिक स्थान आरक्षित थे और इस प्रकार आरक्षण की मात्रा "बालाजी" के मामले में अभिकथित सीमा से अधिक थी। वस्तुतः मेडिकल कालेजों में उपलब्ध स्थानों की संख्या 750 थी। इनमें से 3 स्थान भारतीय मूल के उन सांस्कृतिक विद्यार्थियों के लिए नियत थे जो विदेशों के अधिशासी हैं, दो स्थान कोलम्बो योजना के विद्यार्थियों के लिए, 4 स्थान भारतीय मूल के उन विद्यार्थियों के लिए थे जो वर्मा से प्रवास करके आए हैं, 4 स्थान एशिया और अफ्रीका के देशों से आने वाले छात्रों के लिए थे, 2 स्थान एल. एम. एस. तथा एल. यू.एम. एस. के लिए थे 5 स्थान गोवा के विद्यार्थियों के लिए थे, ढाई प्रतिशत स्थान उन छात्रों के लिए थे, जिन्होंने खेलकूद में असाधारण कौशल और अभिरुचि का परिचय दिया है, 75 स्थान अन्य राज्यों के विद्यार्थियों के लिए केंद्रीय कोटे के रूप में थे। यदि इनमें से कोई स्थान न भरा जाता तो रिक्त स्थान सामान्य मूल को स्थानांतरित कर दिए जाते। शेष स्थानों में से 18 प्रतिशत स्थान अनु. जातियों और अनुसूचित जन जातियों के लिए तथा 30 प्रतिशत स्थान सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षित थे। वाद विषय था- क्या आरक्षण संबंधी सीमा पर बालाजी मामले द्वारा अभिकथित नियम गैर पिछड़े वर्गों की कुछ सामान्य श्रेणियों के लिए किए गए आरक्षण पर भी लागू होगी? निर्णय का सारांश :-

न्यायमूर्ति श्री हेगड़े का मत निम्न है :-

यह तर्क दिया गया है कि सभी ग्रुपों के लिए किए गए आरक्षण 50 प्रतिशत से अधिक थे। तर्क को अस्वीकार करते हुए मैसूर उच्च न्यायालय ने निर्णय दिया है कि सामाजिक तथा शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के लिए स्थानों के आरक्षण की वैधता का निर्णय अनुच्छेद 15(4) में निर्धारित शर्तों के अनुसार किया जाना चाहिए। पिछड़े वर्गों, अनु. जातियों, अनु. जन जातियों से इतर वर्गों के लिए किए गए आरक्षणों की वैधता का निर्णय अनुच्छेद 14 की अपेक्षाओं के आधार पर किया जाना था। इस प्रकार के आरक्षणों को अनुच्छेद 15 (4) के अधीन किए गए आरक्षणों के साथ मिला नहीं देना चाहिए। "बालाजी" के मामले में निर्धारित सीमा केवल उसी आरक्षण पर लागू होती है जो अनुच्छेद 15 (4) के अधीन किया गया है। इसके अन्तर्गत ऐसा कोई आरक्षण नहीं आता जो अन्यथा किया गया है।"

उच्चतम न्यायालय द्वारा "केरल राज्य बनाम एम. एन. टामस" के मामले में न्यायाधिपति फजल अली का अभिमत मध्य प्रदेश राज्य के लिए पूर्ण रूप से उचित है कि किसी राज्य के पिछड़े वर्गों की जनसंख्या 80 प्रतिशत है और सरकार उन्हें प्रतिनिधित्व देने की दृष्टि से, उनके लिए 80 प्रतिशत आरक्षण करती है तो सरकार का यह कदम अनुच्छेद 16 (4) की सीमाओं के अंतर्गत अवैध नहीं होगा। इस उपबन्ध का मुख्य उद्देश्य अपर्याप्त प्रतिनिधित्व को पर्याप्त बनाने के लिए कारगर व्यवस्था है।

हमारे संविधान निर्माता भी मध्य प्रदेश में पिछड़े वर्गों की हालात से पूर्ण रूप से परिचित थे और उन्होंने इन वर्गों के उत्थान हेतु संविधान में भी विशेष व्यवस्था कि है, इस संबंध में संविधान के अनुच्छेद 164 में व्यवस्था की गई है।

अनुच्छेद 164 :- मंत्रियों के संबंध में अन्य व्यवस्थाएं :-

1. राज्यपाल द्वारा मुख्यमंत्री की नियुक्ति की जाएगी और अन्य मंत्रियों की नियुक्ति मुख्यमंत्री की सलाह पर राज्यपाल द्वारा की जायेगी। मंत्रीगण राज्यपाल की इच्छा की अवधि तक अपने पद पर रहेंगे।

परन्तु उड़ीसा, बिहार तथा मध्य प्रदेश राज्यों में आदिम जातियों के कल्याण के लिए भारसाधक एक मंत्री होगा जो साथ साथ अनुसूचित जातियों तथा पिछड़े वर्गों के कल्याण का अथवा अन्य कार्य का भी भार साधक हो सकेगा।

मध्य प्रदेश में आयोग द्वारा संकलित एवं तैयार की गई सन् 1981 की जनगणना के आधार पर वर्ष 1982 में अनु. जातियों, अनु. जन जातियों एवं अन्य पिछड़े वर्गों का प्रतिशत निम्न है।

1. मध्यप्रदेश की संपूर्ण आबादी	सन् 1982 में	5,34,35,009	
2. अनुसूचित जातियों की आबादी	"	69,95,902	13.09 प्रति.
3. अनु. जन जातियों की आबादी	"	1,07,60,551	20.14 प्रति.
4. अन्य पिछड़े वर्गों/ जातियों/ समूहों की आबादी	"	2,56,92,734	48.08 प्रति.
5. उन्नत वर्गो की आबादी	"	99,85,922	18.69 प्रति.

उपरोक्त आकंड़ों के आधार पर अनु. जातियों एवं अनु. जन जातियों एवं अन्य पिछड़े वर्गों की आबादी मध्य प्रदेश में अनुमानतः 81.31 प्रतिशत है। यह वर्ग संवैधानिक आधार पर मध्य प्रदेश में 81.31 प्रतिशत तक शासकीय नौकरियों में आरक्षण पाने की पात्रता रखते हैं। वर्तमान समय में मध्य प्रदेश में अनुच्छेद 16 (4) के अंतर्गत अनुसूचित जातियों एवं अनु. जन जातियों के लिए शासकीय नौकरियों में निम्न आरक्षण है :-

अनुसूचित जाति वर्ग 1 एवं वर्ग 2 में		15 प्रतिशत
अनुसूचित जन जाति वर्ग 1 एवं 2 में		18 प्रतिशत
	योग	33 प्रतिशत
अनुसूचित जाति वर्ग 3 एवं 4		16 प्रतिशत
अनुसूचित जन जाति वर्ग 3 एवं 4		20 प्रतिशत
		36 प्रतिशत

तमिलनाडू में पिछड़े वर्गों, अनु. जातियों, अनु. जनजातियों के लिए आरक्षण अनुच्छेद 16 (4) के अंतर्गत 68 प्रतिशत है। जहां पर आरक्षण व्यवस्था 100 वर्षों से लगातार चालू है, और अभी तक उक्त वर्गों का समुचित प्रतिनिधित्व शासकीय सेवाओं में नहीं हो सका है, इसी प्रकार मध्य प्रदेश में अनु. जातियों एवं अनु. जन जातियों के लिए आरक्षण व्यवस्था के बावजूद प्रतिनिधित्व उनकी जनसंख्या की तुलना में नगण्य है। अनु. जातियों एवं अनु. जनजातियों के लिए अखिल भारतीय स्तर पर आरक्षण सन् 1943 में जारी किए गए थे. लेकिन अभी तक उनका प्रतिनिधित्व नगण्य है जैसा कि "अखिल भारतीय शोषित कर्मचारी (रेलवे) बनाम भारत संघ एवं अन्य" (ए.आई. आर. 1981 सु. को. 298 के पृष्ठ 319 पर) में दिए गए चार्ट से स्पष्ट है जो कि संबंधित परिशिष्ट में अन्यत्र दिखाया गया है।

मध्य प्रदेश में सामाजिक व शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों का शासकीय नौकरियों में आरक्षण अभी नहीं था। आंकड़ों से स्पष्ट है कि उनका प्रतिनिधित्व भी नगण्य है। इसलिए आयोग उनके लिए निम्न आरक्षण अनुच्छेद 16 (4) के अन्तर्गत प्रस्तावित करता है :-

सामाजिक एवं शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के लिए मध्य प्रदेश में पिछड़े वर्गों की जनसंख्या के अनुपात में आरक्षण के हकदार है।

दक्षता में हानि पहुंचाकर आरक्षण नहीं किया जाना चाहिए। इस संबंध में पिछड़े वर्गों को शासकीय नौकरियों में अनुच्छेद 16 (4) के अंतर्गत दिए जाने वाले आरक्षण को लेकर बड़ी चर्चा व आलोचना होती है। इस पर विस्तृत चर्चा करने के पूर्व अनुच्छेद 335 के प्रावधान का उल्लेख आवश्यक है :-

"अनुच्छेद 335 - संघ या राज्य के कार्यों से संसक्त सेवाओं और पदों के लिए नियुक्तियां करने में प्रशासन कार्य पटुता बनाये रखने की संगति के अनुसार अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जन जातियों के सदस्यों का ध्यान रखा जाएगा।"

इस अनुच्छेद 335 में यह ब्यादेश दिया गया है कि संघ या राज्य में सेवाओं और पदों पर नियुक्तियों के लिए अनु. जातियों और अनु. जन जातियों के सदस्यों के दावों का ध्यान रखा जाएगा।

अनुच्छेद 335 में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजातियों का उल्लेख है, अन्य पिछड़ा वर्ग का उल्लेख नहीं है। इसलिए आयोग का यह मत है कि दक्षता अथवा प्रशासनिक कार्य पटुता के संबंध का सिद्धांत सामाजिक व शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के लिए लागू नहीं माना जाएगा।

"दक्षता" से सुशासन की दृष्टि से परीक्षा में अंक ही अभिप्रेत नहीं हैं, किन्तु जनता के प्रति उत्तरदायित्व पूर्ण और प्रति सम्वेदी सेवा भी सम्मिलित है। अव्यवस्थित प्रतिभाशाली व्यक्ति लोक प्रशासन के लिए गंभीर खतरा है। दक्षता के अंतर्गत अपनत्व की भावना व उत्तरदायित्व की भावना सम्मिलित है जो नौकरशाही (यहां निन्दात्मक रूप से इस शब्द का प्रयोग नहीं किया गया है) के हृदय में जागृत होती है, यदि संरचना में हम, भारत की जनता का दुर्बल वर्ग, भी सम्मिलित है। इसके अतिरिक्त आमूल परिवर्तनवादी वर्तमान और अन्यायपूर्ण रूप से झुकाव युक्त भूतकाल के बीच के दावे में सामंजस्य नहीं किया जा सकता। (देखिए ए. आई. आर. 1976 सु. को. 480 के पृष्ठ 534 पर न्यायाधिपति कृष्ण अय्यर का अभिमत।

यदि सर्वोच्च विधि का निर्वचन करने के लिए यह बात आदर्श है तो हमें अनुच्छेद 16 (1) और (2) और (4) के बीच एवं अनुच्छेद 45 और 335 के बीच सामंजस्य का पता लगाना होगा। इसकी पृष्ठभूमि में सबसे पहले समाज करने के लिए बहुत अधिक प्रयत्न करना और तब वर्ग, पंथ के प्रभेद के बिना साथ-साथ बढ़ना आता है।

हमारे संविधान की सामाजिक रीति-नीति अर्थात निचले वर्ग के व्यक्तियों को उदार दृष्टिकोण

अपना कर उपर लाभ बराबर करना और इसके पश्चात सभी के बीच समानता को कड़ाई से प्रवृत करना है। ये दो स्तर वाली प्रक्रिया को प्रतीकात्मक रूप से प्रवृत है, आज का जीव है और अवसर समता की क्रिया विधि की कुंजी है। इसके बराबर महत्व को यह गंभीर चिन्ता है जो गतिहीन और वर्गहीन समाज के लिए दर्शाई गई है, जैसा समाज जादू से तत्काल नहीं बन सकता किन्तु सोच समझकर प्रयत्न करने से ही बन सकता है और प्रशासन में कर्जन के समय से ज्ञात निष्क्रियता के स्थान पर कार्य करने के अच्छे स्तरों के लिए प्रयत्न करना सम्मिलित है।

अनुच्छेद 46 और 325 के उद्देश्यों को जो वास्तव में अनुच्छेद 16 (1) के उद्देश्यों के लिए वाह्य हैं, ऐसे संदर्भ में ऐसे नियमों द्वारा ही पूरा किया जा सकता है जो पिछड़े हुए वर्गों के व्यक्तियों के लिए अधिमान व्यवहार सुनिश्चित करता है और जो अनुच्छेद 16 (1) और 16 (2) के साधारण अर्थ और स्पष्ट विवक्षाओं को कम करते हैं। ऐसा व्यवहार अनुच्छेद 16 (1) में निहित सिद्धांत के यथावत लागू किए जाने को सख्ती से कम करता है। इससे दक्षता की एक समान परीक्षाओं के लागू किए जाने में अवसर की अत्यधिक **समता** के सिद्धांत से विचलन हो जाता है। अनुच्छेद 16 (4), अनुच्छेद 16 (1) की जो ऐसी शर्तों में जिनके अधीन अभ्यार्थी सरकारी सेवाओं में पदों के लिए वास्तव में प्रतिस्पर्धा करते हैं, समता के रूप में परिकल्पित न्याय की गतिशील शक्तियों को दर्शित करता है और अनुच्छेद 46 और 335 की जिनमें राज्य के ये कर्तव्य समाविष्ट हैं कि वह आर्थिक, शैक्षिक और सामाजिक दृष्टि से पिछड़े हुए वर्गों के हितों के ऐसे अग्रसर करेगा, ताकि उन्हें सामाजिक अन्याय के चंगुल से मुक्त किया जा सके, परस्पर विरोधी कशमकश में सामंजस्य स्थापित करने के लिये अन्तः स्थापित किया गया था। अनुच्छेद 16 (1) के क्षेत्र में ये अति उल्लंघन केवल उस विस्तार तक ही अनुज्ञात किए जा सकते हैं जिस तक वे अनुच्छेद 16 (4) द्वारा अपेक्षित है। स्वयं अनुच्छेद 16 (1) में सामाजिक न्याय और समता के व्यापक संविचार को समझाने से स्वयं वह उपबन्ध निष्फल और अनुच्छेद 16(4) निरर्थक हो जायेगा।

अनुच्छेद 16 के खण्ड (4) को लागू करने के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण शर्त है। कोई भी अनुरक्षण दक्षता में हानि पहुंचाकर, जो कि मुख्य बात है नहीं किया जा सकता। किन्तु किसी को दक्षता के बारे में कृत्रिम दृष्टिकोण अपनाना नहीं चाहिए। नागरिकों के पिछड़े हुए वर्ग के पक्ष में की गई कोई हिमायत या की गई शिथिलता, उस समय जबकि वे अनुभव में ज्येष्ठ हैं, दक्षता के किसी ह्रास की कोटि में नहीं आयेगी- (देखिए ए. आई. आर. 1976 सु. को. पृष्ठ 490 के पृष्ठ 555 न्यायाधिपति मुर्तजा फजल अली का अभिमत)

यह कहना एक फैशन है कि और कदाचित इसमें कुछ सच्चाई भी है कि पीढ़ी दर पीढ़ी

राजनीति शास्त्र से लेकर शिक्षण शास्त्र तक अधिकारी वर्ग तक और अन्य व्यक्तियों तक में जीवन के सभी क्षेत्रों में दक्षता का ह्रास हुआ है। फिर भी संसार आगे बढ़ता गया है और केवल ये लोग जिनके वैयक्तिक हितों पर प्रभाव पड़ा है, यह भविष्यवाणी करते हैं कि दक्षता में लगातार कमी आने के कारण नाश हो जायेगा। ऐसे सरकारी कर्मियों के संबंध में जिनमें निचले स्तर के व्यक्ति हों, की जाने वाली इस भविष्यवाणी से कि उनके कारण दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति केवल इसलिए उत्पन्न हो जाएगी क्योंकि हरिजनों, गिरिजनों की अल्प संख्या सरकारी सेवा में प्रविष्ठ हो गई है, हमारे मन पर कोई प्रभाव नही पड़ा है। उनकी मानसिक जड़ता और उनका पिछड़ापन ऐसा है कि इन पक्षपातपूर्ण उपबंधों के बावजूद इन अभागों में न तो चेतना है और न ही उनमें ऐसा कोई अहित सदस्य है जो कि देश के प्रशासन में अपना अधिकार पूर्ण स्थान ले सके। (देखिए ए. आई. आर. 1981 सु. को. 298 के पृष्ठ 328 एवं 329 पर न्यायाधिपति कृष्ण अय्यर का अभिमत)

दक्षता और अरक्षता के बारे में जो घिसी पिटी दलीलें दी गई हैं वे नगण्य रूप से कपोल कल्पित हैं, क्योंकि जो कुछ भी हो उच्चतर स्तरों पर हरिजन/ गिरिजन एवं पिछड़े वर्गों की नियुक्तियां बहुत ही कम हैं। और वे वर्ग 1, 2 और 3 के पदों की दशा में भी नगण्य है प्रबल बहुमत जो कि अनारक्षित समुदायों से संबंधित है, उपधारणातः दक्ष है और आरक्षित अभ्यार्थियों के अल्प प्रतिशत के न्यूनतम प्रवेश के कारण उत्पन्न दक्षता के क्षीण होने का प्रभाव सब मिलाकर प्रशासनिक दक्षता पर महत्वपूर्ण रूप से नहीं पड़ता है।

आरक्षित पदों पर अनुसूचित जातियों/ अनुसूचित जनजातियों एवं पिछड़ा वर्गों के उम्मीदवारों को बड़े पैमाने पर ले लेने से सरकारी सेवाओं के स्तर के गिरने की आशंका भी एक सीमा तक न्यायोचित लगती है। किन्तु क्या यह मानना संभव है कि योग्यता के आधार पर चुने गए सभी उम्मीदवार ईमानदार, कुशल परिश्रमी और निष्ठावान साबित होते हैं? इस समय सभी सरकारी सेवाओं के शीर्ष पदों पर मुख्यतया खुली प्रतियोगिता द्वारा लिए गए उम्मीदवार हैं और यदि यह निष्पादन हमारी नौकरशाही का कोई सूचक हैं, तो वास्तव में इसने अपने आपको सही अर्थों में गौरवान्वित नहीं किया है। तथापि इसका मतलब यह नहीं है कि आरक्षित पदों पर चुने गए उम्मीदवार अच्छा कर पायेंगे। लेकिन इस बात की संभावना है कि अपनी सामाजिक तथा सांस्कृतिक बाधाओं के कारण वे सामान्यतः निरपेक्ष और सक्षम हो सकते हैं। लेकिन इसके विपरीत उनके पास समाज के पिछड़ा वर्गों की कठिनाइयों और समस्याओं के प्रत्यक्ष जानकारी होने का बहुत बड़ा लाभ होगा। सर्वोच्च स्तर पर क्षेत्र कार्यकर्ताओं, नीति निर्माताओं के लिए यह कम महत्व की बात नहीं है।

कुछ हद तक यह सच हो सकता है कि अन्य पिछड़ा वर्गों के लिए आरक्षण तथा अन्य

कल्याणकारी उपायों के अधिकांश लाभों को पिछड़ा समुदायों के अधिक उन्नत वर्गों द्वारा समेट लिया जायेगा। किन्तु क्या यह एक सार्वभौम तथ्य नहीं है? धर्मतंत्रीय व्यवस्था के साथ साथ सभी सुधारवादी उपायों का प्रभाव धीमा होता है और सामाजिक सुधारों की कोई मान्यता नहीं होती। चूंकि मानव प्रवृत्ति उत्सुकता प्रधान होती है, इसलिए वर्गहीन समाज में भी अन्ततः एक "नया वर्ग" बन जाता है। आरक्षण की मुख्य विशेषता यह नहीं है कि अन्य पिछड़े वर्गों में इसके द्वारा समता आ जायेगी जबकि शेष भारतीय समाज सभी प्रकार की असमानताओं से घिरा हुआ है। किन्तु आरक्षण के द्वारा सेवाओं पर से उच्च जातियों की जकड़ निश्चित रूप से समाप्त होगी और आम तौर पर पिछड़े वर्गों में अपने देश के कार्य संचालन में भाग लने की भावना जागृत होगी।

शासकीय सेवाओं में सबसे बड़ी दक्षता निष्ठा एवं ईमानदारी तथा अपने कर्तव्यों का सही रूप में पालन करना है। राष्ट्र द्वारा निर्धारित कार्यक्रमों एवं सिद्धांतों को समर्पित भावना से कार्यान्वित करना भी प्रशासनिक दक्षता का प्रतीक है। अनुसूचित जातियों अनुसूचित जनजातियों एवं पिछड़े वर्गों, के लोगों के लिए संविधान द्वारा प्रदत्त अधिकार प्राप्त हो सके, उनका सामाजिक शैक्षणिक उत्थान हो, आर्थिक असमानता समाप्त हो, वह देश के शासन-प्रशासन में हिस्सेदार बने, इसके लिए जो शासकीय कर्मचारी ईमानदारी से कार्य करें वह भी दक्षता का सबसे बड़ा प्रमाण पत्र होना चाहिए साम्यवादी देशों में उनके सिद्धांत के प्रति समर्पित भावना निष्ठा व ईमानदारी होना ही महान दक्षता मानी जाती है। लेकिन मध्य प्रदेश व भारत वर्ष के कई क्षेत्रों में देखा जा रहा है कि उन्नत वर्गों व उच्च वर्गों के कर्मचारी पिछड़े वर्गों के लिए किए जा रहे कार्यक्रमों के प्रति पूर्वाग्रह से ग्रसित होकर कार्य करते हैं और अपने हितों के विरूद्ध कुठाराघात समझकर कार्यक्रमों की आलोचना करते हैं और ईर्ष्या भाव का खुलकर प्रदर्शन करते हैं, जिसकी समाप्ति तभी होगी जबकि पिछड़े वर्गों के कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में पिछड़े वर्गों के लोगों को ही लगाया जाय।

ऐसा प्रतीत होता है कि अन्य पिछड़ा वर्गों का उत्थान अत्यधिक गरीबी उन्मूलन जैसे व्यापक राष्ट्रीय समस्या का एक अंग है। यह केवल आंशिक रूप से सही है, अन्य पिछड़े वर्गों को राष्ट्रीय भागीदारी से वंचित रखना एक बहुत बड़ी समस्या है, यहां मूल प्रश्न सामाजिक तथा शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़ेपन का है और गरीबी तो केवल इन्हें पंगु बना देने वाला जाति पर आधारित इन प्रतिबंधों का प्रत्यक्ष परिणाम है। चूंकि यह प्रतिबंध हमारे सामाजिक ढांचे से जुड़ चुके हैं इसलिए उन्हें समाप्त करने के लिए ढांचे में व्यापक परिवर्तन करना होंगे। देश के शासक वर्गों द्वारा अन्य पिछड़े वर्गों की समस्याओं के बीच के संबंध में किए गए परिवर्तन करना भी कम महत्वपूर्ण नहीं होंगे।

विशिष्ट शासक वर्ग के दृष्टिकोण में एक ऐसे ही परिवर्तन का संबंध है तथा अन्य पिछड़े वर्गों

के उम्मीदवारों के लिए सरकारी सेवाओं में तथा शैक्षणिक संस्थाओं में आरक्षण की व्यवस्था करना। सामान्यतः यह तर्क दिया जाता है कि अन्य पिछड़े वर्गों की बहुत बड़ी जनसंख्या (48.08 प्रतिशत) को देखते हुए आरक्षित रिक्तियों पर प्रत्येक वर्ष कुछ हजार अन्य पिछड़े वर्गों की भर्ती से उनकी आम स्थिति पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। इसके विपरीत आरक्षित रिक्तियों में बड़े पैमाने पर कर्मचारियों के रख लेने से सरकारी सेवाओं के स्तर और कार्यकुशलता को काफी नुकसान होगा। यह भी कहा जाता है कि ऐसे आरक्षणों का लाभ अन्य पिछड़े वर्गों के उन व्यक्तियों द्वारा उठाया जायेगा जो कि पहले से ही संपन्न है और वास्तविक रूप से पिछड़े वर्ग के व्यक्ति निःसहाय ही रह जायेंगे। इस विचार के विरुद्ध एक दूसरा तर्क यह दिया जाता है कि बड़े पैमाने पर आरक्षण नीति से उन योग्य उम्मीदवारों के मन गहरी ईर्ष्या से भर जायेंगे, जिनका सेवाओं में प्रवेश इसके फलस्वरूप रोक दिया जायेगा।

यह तर्क उन विशिष्ट प्रशासकों व उच्च वर्ग से संबंधित प्रशासकों द्वारा दिया जाता है जो अपना एकाधिकार सुविधायें पर कायम रखना चाहते हैं। ऐसे सभी तर्क एकपक्षीय दृष्टिकोण पर आधारित हैं, कुछ तात्कालिक महत्व वाले क्षेत्रों पर विचार करते समय इसी प्रकार के संकेतों के द्वारा राष्ट्रीय महत्व वाली आर्थिक बड़ी समस्याओं की अपेक्षा की जाती है।

हमारा यह दावा कभी नहीं रहा है कि अन्य पिछड़े वर्गों के उम्मीदवारों को कुछ हजार नौकरियों देने भर से मध्य प्रदेश में 49 प्रतिशत वाली जनसंख्या के इस वर्ग की उन्नति करने व सामाजिक व्यवस्था में बदलने में समर्थ हो जायेंगे। लेकिन हमें यह स्वीकार करना होगा कि सामाजिक पिछड़ेपन के विरुद्ध लड़ाई पिछड़े लोगों के मन में लड़ी जानी है। भारत में सरकारी सेवाओं को हमेशा प्रतिष्ठा और शक्ति के रूप में माना गया है। सरकारी सेवाओं में अन्य पिछड़ा वर्ग के प्रतिनिधित्व को बढ़ाकर हम उन्हें इस देश के शासन व प्रशासन में शामिल होने का अनुभव कराते हैं। जब कोई पिछड़ा वर्ग का एक कलेक्टर या पुलिस अधीक्षक बन जाता है तो पद से प्राप्त होने वाले कायदे यद्यपि उस परिवार तक थोड़ा बहुत सीमित रहते हैं लेकिन उस जाति या वर्ग पर मनोवैज्ञानिक प्रभाव बहुत ज्यादा होता है कि उक्त पिछड़ा वर्ग उम्मीदवार का समूचा समुदाय अपने आपको सामाजिक रूप से उन्नत महसूस करने लगता है। सामान्यतः जब कोई स्थाई लाभ समुदाय को नहीं मिलते हैं, जब यह भावना कि "शक्ति के गलियारे" में अब उनका "अपना आदमी" है। एक साहसवर्धन के रूप में कार्य करती है।

आयोग ने अपने भ्रमण के दौरान यह अध्ययन किया है कि पिछड़े वर्गों से संबंधित कर्मचारियों, अफसरों ने आयोग के कार्य संचालन में, आकंड़े एकत्रीकरण तथा प्रत्येक सामग्री के संकलन में जिलों में हृदय से सहयोग दिया है। आयोग का यह भी अनुभव है कि पिछड़े वर्गों के

शासकीय कर्मचारी, इन शोषित वर्गों को निष्ठा व समर्पित भावना से उनके लिए निर्धारित कार्यक्रमों के कार्यान्वयन में सहयोग देते हैं।

किसी लोकतांत्रिक ढांचे में प्रत्येक व्यक्ति और समुदाय को कोई इस देश के शासन में भाग लेने के लिए वैध अधिकार और आकांक्षाएं प्राप्त हैं कोई भी स्थिति जिसके परिणामस्वरूप प्रदेश की लगभग 49 प्रतिशत जनसंख्या के लोग उक्त अधिकारों से वंचित रह जाते हैं।

किसी हद तक यह सच है कि अल्प पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण किए जाने से अन्यों के मन में कोई ईर्ष्या पैदा होगी। लेकिन क्या केवल इस ईर्ष्या को सामाजिक सुधार के विरुद्ध नैतिक विशेषाधिकार के रूप में प्रयोग करने की अनुमति दी जानी चाहिए। अंग्रेज को भारत छोड़ने में काफी ईर्ष्या हुई, राजाओं महाराजाओं, जमींदारों को अपने राज्य व जमींदारी छोड़ने में काफी ईर्ष्या व नाराजी हुई थी, तो क्या सरकार ने इस कार्य को सामाजिक सुधार हेतु नहीं किया। अधिकतम कृषि जोत सीमा अधिनियम, शहरी सीलिंग कानून पास करके आर्थिक सुधार किए गए हैं इससे भी निहित स्वार्थों के मन में ईर्ष्या हुई है, लेकिन सरकार ने यह कार्य किया है। सभी गोरों के मन में ईर्ष्या जबकि काले लोग दक्षिणी अमरीका में रंगभेद के विरुद्ध विरोध प्रगट करते हैं। जबकि उच्च जातियां जो कि प्रदेश में 15 प्रतिशत से भी कम है, अन्य लोगों के साथ अन्याय करती हैं इससे शोषित एवं निम्न वर्ग के मन में भी ईर्ष्या सदियों से चली आ रही है। 15 प्रतिशत उच्च जातियां 90 प्रतिशत शासकीय सेवाओं में एकाधिकार करके बैठी है इससे भी अन्य पिछड़े वर्गों के मन में तीव्र ईर्ष्या है। किन्तु अब जबकि निम्न जातियां शक्तियों और प्रतिष्ठा के राष्ट्रीय अंश व पूंजी में थोड़े से हिस्से की मांग कर रही है तो यह तर्क दिया जा रहा है कि इससे विशिष्ट शासकों के मन में ईर्ष्या होगी। पिछड़ा वर्गों के लिए आरक्षण के विरुद्ध दिए गए सभी निरर्थक तर्कों में कोई ऐसा तर्क नहीं है जो ईर्ष्या की स्थिति से सनहित करता है।

वास्तव में हिन्दू समाज में आरक्षण की एक बहुत ही कठोर योजना चलाई गई है जिसे जाति प्रथा के द्वारा आन्तरिक रूप दिया गया था। आरक्षण के जाति नियमों का उल्लंघन करने के लिए एकलव्य ने अपना अंगूठा खोया और शाम्बुक ने अपनी गर्दन। अन्य पिछड़े वर्गों के आरक्षण के विरुद्ध मौजूदा आक्रोश स्वयं सिद्धांत के विरूद्ध नहीं है परन्तु लाभ पाने वालों के नए वर्ग के विरुद्ध है, क्योंकि अब वे उन अवसरों की मांग कर रहे हैं जिन पर उच्च जातियों ने अपना एकाधिकार जमाया हुआ है। पिछड़े वर्ग शासन-सत्ता, प्रशासन-सत्ता व धन-सत्ता में हिस्सेदारी मांग रहे हैं।

पिछड़े वर्गों के उम्मीदवारों के विरुद्ध एक आरोप यह भी लगाया जाता है कि वह "योग्य"

और "उपयुक्त" नहीं होते हैं। कहा जाता है कि मेडिकल कालेजों में कम अंक प्राप्त होने पर भी पिछड़े वर्गों के उम्मीदवारों को प्रवेश मिलने से चिकित्सा महाविद्यालयों का स्तर गिर रहा है तथा जो डाक्टर इस प्रभार से डिग्री प्राप्त करेंगे वे अयोग्य होंगे।

इस निराशाजनक स्थिति को देखिए जिसमें की सरकार पिछड़े वर्गों अनुसूचित जाति, अनुसूचित जन जातियों के लोगों को प्रतिनिधित्व देने का प्रयत्न कर रही हो, ये दुखी लोग जो कि शताब्दियों से पद-दलित रहे हैं, जगाने की उत्प्रेरणा के बावजूद अब भी तंद्रा की अवस्था में है। अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों व पिछड़े वर्गों के समुदायों को यह कह कर दंडित करना कि उनमें कम बौद्धिक शक्ति मौजूद है, झूठा आरोप है और अवैज्ञानिक प्रख्यान है। यदि ऐसा है तो फिर बाल्मीकी और व्यास से लेकर बाबा साहब अम्बेडकर के बारे में क्या कहा जाएगा? जिन्होंने दलित वर्गों में जन्म लेकर अपनी योग्यता की धाक जमा दी है। युगों का अंधकार और जड़ीकृत माहौल जिनमें शूद्रों और पंचमों ने अपनी मानसिक शक्ति जंजीरों में जकड़े रखने दी है अपनी महत्ता के प्रति प्रत्यक्ष उत्तरदायी है। यदि एक बार अधिक अच्छा माहौल और अधिक अच्छा अवसर उनकी मैधा को अनुप्रमाणित कर देते हैं तो भारतीय खजाने में उनका जो योगदान होगा उससे भारत के मानवीय स्तरों में और लोकतांत्रिक हैसियत में वृद्धि होगी। मेधा का लोकतंत्र हमारी संस्कृति का अव्यक्त मुख्य प्रतिपादन है।

जो मूल प्रश्न उत्पन्न होता है वह इस संबंध में है कि योग्यता और उपयुक्तता क्या है। विशिष्ट वर्ग के ऐसे लोग जिनकी सहानुभूति जनता के साथ थी और जो अब समाप्त हो चुकी है। भारतीय लोगों के मान की दृष्टि से सरकार चलाने के लिए कम योग्य है, यदि हम ऐसे संवेदनशील हृदय और स्पन्दनशील मस्तिष्क के कारण जो कि लोगों के आंसुओं को समझने में सक्षम हैं, ग्रामीण तनाव एवं गंदी बस्ती की दरिद्रता सहित देश की विकास संबंधी आवश्यकतायें तेजी से बढ़ेगी।

"सद्भाविक समर्पण" और "बौद्धिक ईमानदारी" में योग्यता और उपयुक्तता के प्रमुख संघटकों मे से कुछ हैं- जो कि आक्सफोर्ड या क्रेम्ब्रिज हार्बड या भारतीय संस्था से प्राप्त कोई भी डिग्री नहीं है। दुर्भाग्यवश हमारे प्रकरण की प्रक्रिया का अतिमुखी कारण ही बिगड़ा हुआ है और अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों व पिछड़े वर्गों से आने वाले अभ्यार्थियों के समान ये लोग जिनको जन्म से ही ग्रामीण भारत की दशा की अपघाती रही है, एक अर्थ में उन लोगों की अपेक्षा अधिक योग्य हैं जो साधन संपन्न परिस्थितियों में जी रहे हैं और जो पीड़ित जनता की मानवतावादी नियति के प्रतिकूल है और सृष्ठ करने की शक्ति को एक तरफ फैंक देती है। हमें इन क्षेत्रों के संबंध में मत व्यक्त करने की आवश्यकता नहीं है कि उन गुणों का जिनकी आवश्यकता

प्रशासन में कमियों में होती है और उन समाजवादी मूल्यों का जो कि कार्यालय में सोपानिक के पास होना चाहिए, जायजा लेने में भी मौलिक रूपान्तर आमूल भूर्वाकिमुखीकरण ऐसा उद्देश्य है जिनकी इच्छा दिल से करनी होती है। इस बात पर राष्ट्रीय स्तर पर वाद विवाद करने की आवश्यकता है। अंध विश्वासों से भरे आग्रह के साथ प्रकरण विषयक हमारी प्रक्रिया पर अभी भी औपनिवेशिक प्रभाव शेष है और दक्षता तथा योग्यता के बारे में अधिक संकुचित संकल्पनायें, महात्मा गांधी, डॉ. अम्बेडकर और जवाहर लाल नेहरू जैसे महान व्यक्तियों के विचारों को महत्वहीन बनाने के लिए सरलता के साथ उत्पन्न की जाती है, जो कि उल्लेख किये जाने के लिए कुछ लोग हैं, जिन्हें लोगों के नब्ज की पहचान थी।

प्रत्येक मौलिक विचार की निन्दा यह कहकर की जाती है कि वह तो अनुश्रुति है। प्रत्येक नवीन विचार को स्वीकार किये जाने के पूर्व ही उनका विरोध होता है।

उक्त संदर्भ में आयोग अन्य पिछड़े वर्गों के लिए शासकीय, अशासकीय तथा अन्य क्षेत्रों में उपलब्ध सेवाओं में निम्नलिखित आरक्षण व्यवस्था की अनुशंसा करता है-

1. मध्य प्रदेश में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिये उनकी जनसंख्या के अनुपात पर राज्य सरकार के अधीन सभी सेवाओं में और सरकारी क्षेत्रों के उपक्रमों में उनके लिये आरक्षण का प्रावधान किया गयाहै। केंद्रीय सरकार ने भी उनके जनसंख्या के अनुपात में आरक्षण किया है।

   पिछड़े वर्गों को उनकी जनसंख्या के अनुपात में आरक्षण 48.08 प्रतिशत अपेक्षित है। आयोग संविधान के सभी पहलुओं, न्यायालयों के निर्णयों व तमिलनाडू आदि राज्यों के उदाहरण को ध्यान में रखते हुए समस्त शासकीय, अर्द्धशासकीय एवं सार्वजनिक संस्थानों की सेवाओं में पिछड़े वर्ग को 35% आरक्षण प्रदान किये जाने की सिफारिश करता है।

2. उपर्युक्त आरक्षण अन्य पिछड़े वर्गों को पदोन्नति कोटा एवं चयन पदों के कोटा में भी लागू किया जाये।

3. खुली प्रतियोगिता में योग्यता के आधार पर भर्ती किए गए व सफल हुए पिछड़े वर्गों के उम्मीदवारों को उनके 35 प्रतिशत आरक्षण कोटा के साथ समायोजित नहीं किया जाना चाहिए।

4. यदि किन्हीं कारणों से आरक्षण कोटा न भरा जा सके तो तीन साल की अवधि तक सुरक्षित रखते हुए जारी रखना चाहिए और उस अवधि के पश्चात अनारक्षित किया जाय।

5. सीधी भर्ती के लिए अधिकतम आयु सीमा में छूट 5 वर्ष की अन्य पिछड़े वर्गों के उम्मीदवारों को भी दी जानी चाहिए जिस प्रकार अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के उम्मीदवारों के संबंध में अपनाई जाती है तथा उनकी छूट प्रदान की जाती है।

6. पदों के प्रत्येक वर्ग के लिए संबंधित प्राधिकारियों द्वारा उसी प्रकार से रोस्टर प्रणाली अपनाई जानी चाहिए जिस प्रकार से वर्तमान में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजातियों के उम्मीदवारों के संबंध में अपनाई जाती है।

7. आरक्षण की उपर्युक्त योजना को पूर्ण रूप में, राष्ट्रीयकृत बैंकों, सहकारी समितियों, सहकारी संघों, नगरपालिकाओं, नगरनिगमों, भूमि विकास बैंकों, निगमों, आयोगों के साथ-साथ राज्य सरकारों के अधीन सार्वजनिक क्षेत्रों के उपक्रमों को सभी भर्तियों में भी लागू किया जाना चाहिए।

8. सरकार से प्रत्येक रूप में वित्तीय सहायता प्राप्त कर रहे निजी क्षेत्र के प्रतिष्ठानों में भी उपयुक्त आधार पर कमियों को भर्ती करने के लिए बाध्य किया जाकर, आरक्षण का कड़ाई से पालन करवाना चाहिए।

9. सभी विश्वविद्यालयों तथा संबंद्ध कालेजों में उपर्युक्त आरक्षण योजना अन्य पिछड़े वर्गों के उम्मीदवारों के लिए कड़ाई से लागू की जानी चाहिए।

10. इन सिफारिशों को समुचित रूप से प्रभावी बनाने के लिए इस बात की आवश्यकता है कि वर्तमान अधिनियमों, कानूनों, कार्यविधियों आदि को संशोधित करने के लिए सरकार द्वारा पर्याप्त संवैधानिक प्रावधान उस सीमा तक करने चाहिए, जब तक कि वे इन सिफारिशों के अनुरूप न बन जाए।

11. राज्य शासन ने संविधान के अनुच्छेद 309 के अंतर्गत शासकीय कर्मचारियों को भर्ती के संबंध में कानून बनाने में विलम्ब किया है, इसी प्रकार अनुच्छेद 229 के अंतर्गत हाईकोर्ट के कर्मचारियों के भर्ती के संबंध में कानून नहीं बनाया है। इसलिए हमारा आयोग सिफारिश करता है कि राज्य सरकार इस संबंध में तत्काल कानून बनाकर, पिछड़े वर्गों के हितों का संरक्षण व आरक्षण करे।

12. संविधान के अनुच्छेद 320 (4) के अंतर्गत राज्यपाल को अधिकार है कि कुछ श्रेणी के पदों को लोक सेवा आयोग के क्षेत्र से अलग करने का कानून बना सकता है तथा लोक सेवा आयोग से सलाह न लेने का नियम व विधान बना सकता है, जिससे पिछड़े वर्ग के उम्मीदवारों को फायदा पहुंच सके। अर्थात अनुच्छेद 16 (4) एवं अनुच्छेद 5 के प्रावधान प्रभावशाली ढंग से किस प्रकार कार्य करें यह राज्य सरकार के अधिकार क्षेत्र में आता है।

अतएव आयोग सिफारिश करता है कि मध्य प्रदेश सरकार तत्काल महामहिम राज्यपाल को अनुच्छेद 320 (4) के अन्तर्गत नियम व विधान बनाने हेतु आवश्यक कार्यवाही करें।

13. अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के उम्मीदवारों ने हमारे आयोग के समक्ष यह शिकायत की है कि उनके विभाग के उच्च अधिकारीगण अधिकांश उच्च वर्गों व जातियों के होते हैं जो कि ईर्ष्या के कारण सेवा पुस्तिकाओं में गोपनीय अभिलेखों में प्रतिकूल रिपोर्ट लगा देते हैं, और बलपूर्वक सेवा मुक्ति करवा देते हैं, तरक्की में बाधा पैदा कर देते हैं। संबंधित कर्मचारी को सुनवाई का अवसर भी नहीं देते और न अपील की व्यवस्था है। अतः हमारा आयोग यह सिफारिश करता है कि अन्य पिछड़े वर्गों के कर्मचारियों के गोपनीय अभिलेखों और सेवा पुस्तिकाओं में प्रतिकूल रिपोर्ट देने के पूर्व उनको सुनवाई का अवसर दिया जाय तथा अपील की व्यवस्था भी नियम बनाकर की जाय।

14. अन्य पिछड़े वर्गों के कर्मचारियों के अवकाश प्राप्त करने की अवधि 5 वर्ष बढ़ाई जाये, क्योंकि वे अपने सामाजिक परिवेश के कारण देर से शिक्षा प्रारंभ कर पाते हैं। इसलिए यह आयोग सिफारिश करता है कि अवकाश प्राप्त करने की उम्र में पिछड़े वर्गों के लिए 5 वर्ष की अवधि बढ़ाई जाये।

15. पिछड़े वर्गों के उम्मीदवारों के लिए भर्ती के पूर्व साक्षात्कार के लिए प्रशिक्षण कक्षाएं राज्य शासन द्वारा चलाई जाये ताकि वह उन्नत वर्गों की बराबरी में साक्षात्कार की प्रतियोगिता में सफल हो सके।

16. केन्द्रीय बैंक, राष्ट्रीयकृत बैंक, स्टेट बैंक, रिजर्व बैंक, सार्वजनिक संस्थान, अर्धशासकीय संस्थान, केन्द्रीय निगम बोर्ड, निजी संस्थान, वित्त निगम,

इत्यादि जिस भी केंद्रीय संस्था का कार्यालय व उप कार्यालय मध्यप्रदेश में है, उनमें भी अन्य पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण व्यवस्था कड़ाई से लागू होना चाहिए। यदि वे इसका पालन न करें तो राज्य सरकार को उनको सभी प्रकार का सहयोग देना बंद कर देना चाहिए।

17. मध्य प्रदेश में स्थापित केंद्रीय सार्वजनिक संस्थानों, उद्योगों, एवं निजी शैक्षिक संस्थानों में मध्य प्रदेश में मूल रूप से निवास करने वाले पिछड़े वर्गों के उम्मीदवारों को सभी श्रेणियों में आयोग की सिफारिश के अनुसार स्थान आरक्षित किये जावे।

18. मध्य प्रदेश सरकार द्वारा गठित मध्य प्रदेश अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति एवं पिछड़ा वर्ग आयोग को, राज्य शासन द्वारा पिछड़े वर्गों को प्रदान की गई एवं प्रदान की जाने वाली समस्त सुविधाओं एवं आरक्षण व्यवस्था का कार्यान्वयन ठीक से हो रहा है या नहीं, इसकी निगरानी का अधिकार सरकार द्वारा प्रदान करने की अनुशंसा की जाती है।